चन्दामामा
अगस्त १९९३

Agents are required in the following areas
for the distribution of Chandamama Magazine.
1. AGRA
2. ALMORA
3. BHEL TOWNSHIP, JHANSI
4. BOKARO STEEL CITY
5. HALDWANI
6. KANKHAL
7. ORAI
8. RAE BARELY
9. RAMPUR
10. SHANTHINAGAR
11. SHIKOHALIAD
12. SORO
13. TINSUKIA
14. BAIJNATH
15. BEAWAR
16. BHIMMAL
17. DATIA
18. HARDA
19. KAITHAL
20. KATHUA
21. KHARGONE
22. MHOW
23. REWARI
24. REWA
25. SARKAGHAT
26. SIROHI
27. SUMERPUR
28. SURAJPUR
29. AMRITSAR
30. KHARAGPUR
31. AJMER
For further details please contact:-
DOLTON AGENCIES
Chandamama Buildings
188 N.S.K. Salai,
Vadapalani
Madras 600 026.

पिडिलाइट लाए वॉटर कलर्स

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

महान वृत्ति

ब्रिटेन और वेल्स के चौंदह साल के साठ हज़ार विद्यार्थी नब्बे मिनिटों की अंग्रेजी भाषा की परीक्षा पठन और लेखन की दे नहीं पाये, जो सात जून को होनेवाली थी । कारण था-तीन अध्यापकों के संघों ने इन परीक्षाओं का बहिष्कार किया । क्या यह बडे ही दुख की बात नहीं?

इस नयी परीक्षा को चलाने का विचार ब्रिटिश सरकार ने किया । विद्यार्थी 'ए' स्तर की परीक्षाओं में प्रवेश के दो साल पहले अपने को योग्य सिद्ध करें, यह परीक्षा इसका एक प्रयोग था । इन विद्यार्थियों की अभी सोलह साल की उम्र है और इसमें उत्तर्ण होने से वे विश्वविद्यालयों में प्रवेश पा सकते हैं । इस परीक्षा का उद्देश्य उनको एक अवकाश प्राप्त कराने का था, जिससे वे दो और साल अध्ययन करें और 'ए' स्तर की परीक्षाओं में भाग ले सकें । परीक्षाओं के परिणाम के आधार पर वे स्कूल की पढ़ाई शायद छोड भी दें, जिससे वे किसी और वृत्ति में अपने को भोग्य बनायें या किसी नौकरी की खोज में जावें । इससे स्कूलों पर दबाब कम पड़ेगा और साथ ही चौदह और सोलह वर्ष के विद्यार्थियों पर भी कम मानसिक बोझ होगा । इसका प्रभाव कालेजों और विश्वविद्यालयों पर भी होगा । स्पष्ट है, योग्यता की परीक्षा के कारण विद्यार्थी अपने भविष्य का निर्णय आप ही कर पायेंगे । यह तो निर्विवाद है कि सरकार ने इस परीक्षा को चलाने की नीति के बारे में अध्यापकों, प्रधानाचार्यों, शैक्षिक विद्वानों औा माता-पिताओं से अवश्य ही परामर्श किया होगा । परीक्षाओं को चलाने के लिए बहुत ही बडे स्तर की आवश्यकताएँ तो होती ही हैं, जैसे बडी-सी बडी संख्या में जन-संख्या व धन-शक्ति ।

बताया गया है कि जिन अध्यापकों ने इन परीक्षाओं को चलाने से अपना असहयोग प्रकट किया है, उनका तर्क यह है कि परीक्षाओं की पद्धति में काफ़ी त्रुटियाँ हैं । इन परीक्षाओं को चलाने से उनपर काम का बहुत बोझ भी पड़ेगा । ज्ञात हुआ है कि इस बहिष्कार के लिए प्रधानाचार्यों, स्कूलों के संचालकों व माँ-बापों का भी समर्थन उन्हें प्राप्त हुआ है ।

बहिष्कार करनेवालों को छोड़कर और अन्य लोगों को अवश्य ही उनके इस निर्णय पर दुख हुआ होगा क्योंकि अध्यापकों ने विद्यार्थियों की भलाई और उनके भविष्य को ध्यान में नहीं रखा । अध्यापन-कार्य जब कि महान वृत्ति है, ऐसे निर्णय समुचित नहीं ।

हम सभी को उनके इस निर्णय पर बड़ा ही दुख होता है ।

वर्ष : ४५ | अगस्त १९९३ | अंक : १२

एक प्रति : रु. ४/- | वार्षिक चन्दा : रु. ४८/-

समाचार-विशेषताएँ
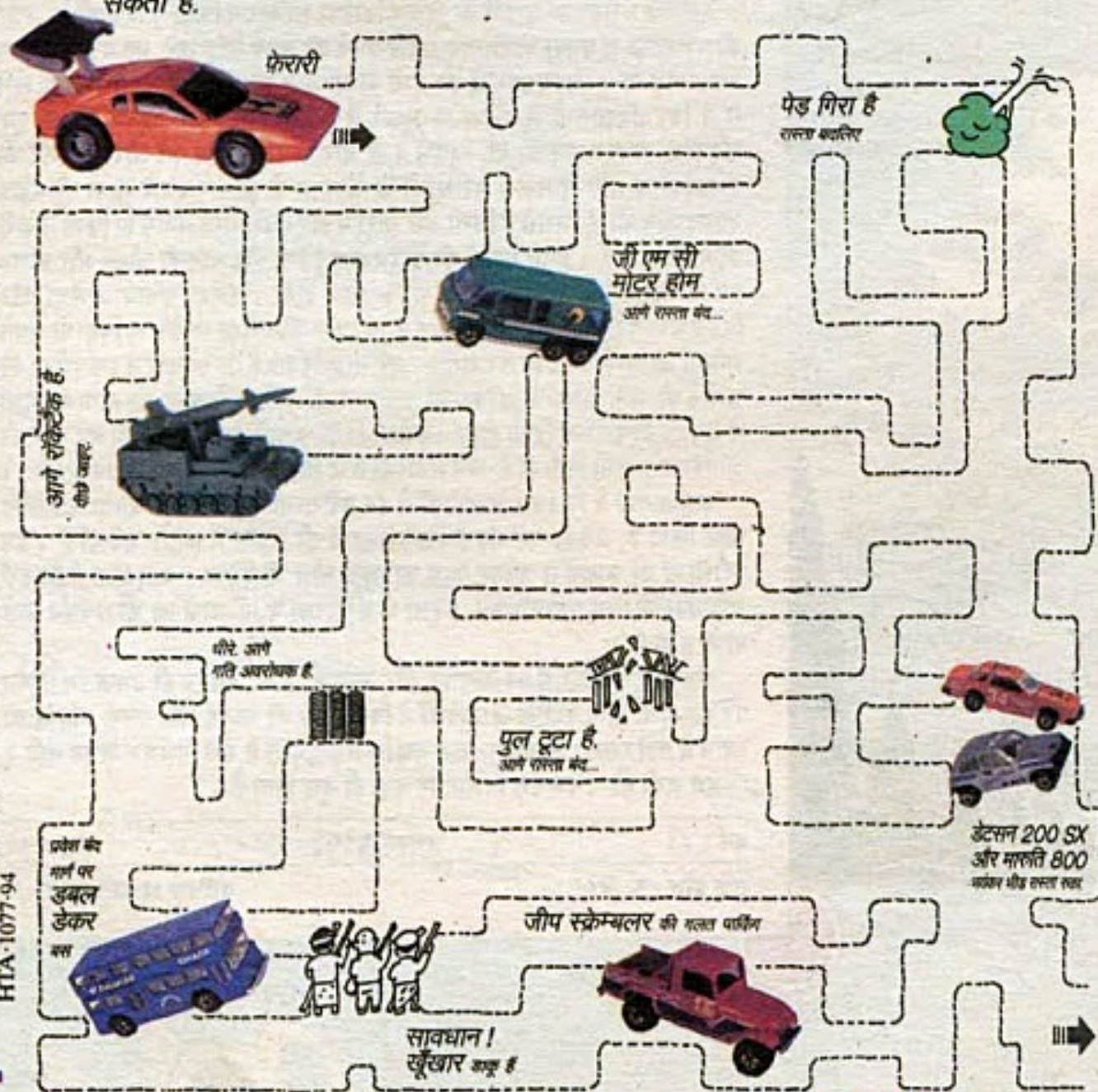
अफ्रीका का ५२ वाँ देश एरिट्रिया

मई २८ को, संयुक्त राष्ट्र संघ में एरिट्रिया १८२ वें सदस्य के रूप में स्वीकृत हुआ । इसके ठीक चार दिनों के पहले मई २३ इतवार की आधी रात को, राजधानी अस्मार नगर की गलियों में, एरिट्रिया के हज़ारों लोग आनंद और उत्साह से अपनी आज़ादी के गीत गाते रहे और नाचते रहे ।

वह अब तक इथियोपिया का केवल उत्तरी प्रांत था, पर आज वह स्वतंत्र देश बनकर अलग हो गया ।

एरिट्रिया का बहुत ही लंबा इतिहास है । वह सातवीं शताब्दी तक, संसार भरमें बहुत ही प्राचीन राज्य कहे जानेवाले इथियोपिया का भाग मात्र था । सोलहवीं शताब्दी के बीच में वह टर्की देशवासियों के अधीन हो गया ।

१८८९ में वह इटली से शासित हुई । इटली के तानाशाह मुसोलिनी ने १९३६ में इथियोपिया पर जब आक्रमण किया, तब उसने उसे अपने युद्ध के कार्य-कलापों के लिए अड्डा बनाया । पदवीच्युत सम्राट हेली सेनात्सी इंग्लैंड भाग गया । १९३९ में द्वितीय विश्वयुद्ध का आरंभ हुआ । उस समय मित्रपक्षों ने इथियोपिया को मुक्ति प्रदान की और उसे फिर सम्राट के सुपुर्द किया । १९४१ में एरिट्रिया, इथियोपिया के अधीन स्वयं प्रतिष्ठात्मक प्रांत हुआ । उसके बाद क्रमशः विभाजन का आंदोलन शुरू हो गया । मुख्यतया १९७४ में सिपाहियों का जो ग़दर हुआ, उसमें सम्राट पदवीच्युत

हो गया, इससे आंतरिक झगडों ने विस्तृत रूप लिया । उस समय तक देश का अधिक भाग स्वतंत्रता के लिए लड़नेवाले गोरिल्लाओं के वश में था । स्वतंत्रता के लिए लड़नेवाले गोरिल्लाओं और इथियोपिया के सैनिकों के बीच में हुई यह लड़ाई तीस सालों तक चलती रही ।

आखिर १९९१, मई २४ को एरिट्रिया राजधानी 'अस्मारा' एरिट्रियन पीपुल्स लिबरेशन फ्रंट (ए. पी. एल. एफ.) के हाथों में आया । वैसे तो उसी दिन वह स्वतंत्र हुआ, पर अपने को संपूर्ण स्वतंत्र देश के रूप में घोषित करने के लिए उसे दो साल और लगे ।

अप्रैल २३-२५ तारीख़ों में लोगों के अभिप्राय जानने का जो कार्यक्रम हुआ, उसमें ९९.८ प्रतिशत लोगों ने इथियोपिया से अलग होने के लिए अपना समर्थन व्यक्त किया ।

उसके बाद 'नेशनल असेंब्ली' का समावेश हुआ । उस समावेश में इस्सायिधस अफेवोर्की अध्यक्ष चुना गया, जिसने ए. पी. एल. एफ गोरिल्लाओं का नेतृत्व करके विजय प्राप्त की ।

इस 'नेशनल असेंब्ली' के कुल सदस्य १३४ हैं । इनके अलावा एरिट्रिया प्रांत से चुने गये तीस प्रतिनिधि होंगे, बीस प्रमुख व्यक्ति और १० स्त्रीयाँ, स्त्रीयों का प्रतिनिधित्व करनेवाली भी होंगीं ।

यह असेंब्ली चार सालों तक अधिकार में रहेगी । तब एक नयी कमीशन का आयोजन होगा और यह अफ्रीका खंड के इस ५२ वें देश के नये संविधान को रूप देगी ।

एरिट्रिया की आबादी क़रीबन ३५,००,००० है । इनमें ईसाई और मुसलमानों की संख्या बराबर की है ।

ए.पी. एल. एफ. में ईसाइयों की ही प्रमुखता रही है ।

अध्यक्ष अफेवोर्की ने कहा "यह बडे आनंद की बात है कि एरिट्रिया का पुन: जन्म हुआ है । इस शुभ अवसर पर इस नूतन देश की अभि-वृद्धि के लिए संसार के सब देशों को सह्दयता से प्रोत्साहन देना चाहिये" ऐसी इच्छा उन्होंने अपने संदेश में प्रकट की ।

देश के आंतरिक युद्ध में बड़े ही साहस के साथ युद्ध करनेवाले २८ साल की उम्र के साद महम्मद ने मई २३ को एरिट्रिया के नये झंडे को फहराया । सामान्य खाकी निकर, प्लास्टिक चप्पल और टोपी पहननेवाले इस जवान ने इस अवसर पर कहा "इस शुभ अवसर के लिए ही आठ साल लगातार मैंने लड़ाई लड़ी है । आज इस दिन पर मुझे बेहद खुशी हो रही है और गर्व भी ।"

ईश्वरी का तर्क

मदनपुर गाँव का निवासी मोतीराम बहुत ही शौकीन आदमी है । बडी ही अच्छी तरह बातें करता है । सब की मदद करता है । लेकिन शादी हो जाने के बाद उसे यह सब छोड़ देना पडा । पत्नी ईश्वरी सब से मिल-जुलकर रहती नहीं थी उल्टे सबपर शंका करती और हर बात का उल्टा अर्थ निकालती । अपने इन दुर्गुणों के साथ-साथ वह बडी ही कंजूस भी थी, जिसकी वजह से मोतीराम को मज़बूरन अपनी आदतें छोड़नी पडीं । इससे वह हताश नहीं हुआ । वह लगातार इन्हीं कोशिशों में लगा रहा. कि पत्नी के स्वभाव में परिवर्तन लाऊँ ।

सीताराम अपने किसी काम पर उस गाँव में आया हुआ था । वह मोतीराम के घर आया और बोला "कैसे हो? सच कहा जाए तो मेरा काम पास ही के गाँव में है । मेरे यहाँ आने का आशय तो सिर्फ तुमसे मिलना है । तेरे साथ एक सप्ताह तक रहकर अपने बचपन की यादें ताज़ी करने की मेरी बड़ी इच्छा है । भला वे दिन मैं कैसे भुला पाऊँगा?"

सीताराम और मोतीराम बचपन के दोस्त हैं । मोतीराम की मज़ेदार बातें सुनते हुए सीताराम को बड़ा मज़ा आता या । बचपन में जब कभी भी कोई जरूरत आ पड़ी, सीताराम ने मोतीराम की मदद की । सीताराम स्वयं धनवान था । जब वह बड़ा हुआ, शहर चला गया और वहाँ उसने बड़े पैमाने पर व्यापार किया । अब वह करोड़पति है ।

ईश्वरी को सीताराम का उसके घर आना अच्छा नहीं लगा । उसने अपने पति से कहा जब कि वह इतना धनवान है तब उसे तो किसी और अच्छी जगह पर रहना चाहिये था । उसके हमारे यहाँ ठहरने का कारण

नरेंद्र

उसकी कंजूसी है, ना कि मित्रता । यह तो सिर्फ़ एक बहाना है । एक दो दिन अगर वह यहाँ ठहरता तो कोई बात नहीं परंतु वह तो एक सप्ताह यहाँ रहनेवाला है । ऐरे-ग़ैरों को इतने दिन मैं खाना खिला नहीं सकूँगी ।" उसे भय था कि स्वादिष्ट पकवान बनाकर खिलाऊँगी तो वह यहाँ से जाने का नाम ही नहीं निकालेगा, इसलिए हर रोज़ जो तरकारियाँ बनती थीं उन्हें बनाना भी उसने छोड़ दिया । अब वह तीनों वक़्त सीताराम को अचार डालकर ही खाना खिलाती थी । उसका विश्वास था कि ऐसा करने पर सीताराम जल्दी ही उसके घर से निकल जायेगा ।

सीताराम ने इसकी कोई परवाह नहीं की । जो भी खिलाती, आनंद से खाता था । इसने कभी सोचा तक नहीं कि मुझे क्यों ऐसा शुष्क भोजन खिलाया जा रहा है? दिन भर वह बाहर के काम-काज में व्यस्त रहता था । शाम को वापस आने के बाद रात भर दोनों दोस्त आधी रात तक बातों में तल्लीन रहते । सीताराम को तो ये बातें बड़ी ही रुचिकर लगती थीं । बातों के बीच में उनका ठठाकर हँसना, ज़ोर-जोर से चिल्लाना ईश्वरी को पसंद आता नहीं था । वह मन ही मन क्रोधित होती थी, जलती थी ।

जिस दिन सीताराम निकल पड़ा, उस दिन उसने ईश्वरी से कहा "मैं अपने मित्र से मिलने आया हूँ । मेरे यहाँ रहने से तुम्हें बहुत तकलीफ़ें पहुँची होंगी, असुविधा हुई होगी । तुमने जो भोजन मुझे खिलाया, जन्म-भर भुला नहीं सकता । तुम्हारा आतिथ्य तो मेरे मित्र की मित्रता और उसकी बातों से भी अधिक उत्तम है । आते समय अपने मित्र के लिए एक भेंट ले आया हूँ । उसको स्वीकार करने का अधिकार उससे अधिक तुम्हीं को है" कहते हुए उसने हीरे की एक सुँदर अंगूठी उसे दी ।

सीताराम से उसने कहा "हमारे शहर में देखने लायक बहुत-सी विचित्रताएँ है । मेरी दृदयपूर्वक आकांक्षा है कि तुम दोनों दंपति अवश्य ही मेरे शहर आयें, मेरे घर पर रहें और मेरा आतिथ्य स्वीकार करें । इसे मैं अपना भाग्य समझूँगा" ।

मित्र के चले जाने के बाद मोतीराम ने

अपनी पत्नी से कहा "अब देख लिया है ना उसकी मित्रता? कम से कम अब तेरी समझ में तो आ गया ना कि हमारी मित्रता कितनी गाढ़ी है?"

तिरस्कार-भरे स्वर में ईश्वरी ने कहा "आप नादान हैं, इसलिए आपका विश्वास है कि वह आपका दोस्त है। वह तो एक व्यापारी है, तिसपर एक नंबर का कंजूस। पड़ोस के गाँव में धनवानों के ठहरने के लिए इंद्रभवन जैसा अतिथि-गृह है। उसमें अगर आपका दोस्त रहता तो बहुत ही ख़र्च होता। इसलिए चालाक आपका दोस्त हमारे ही धर बसा। आप समझते हैं कि हीरे की अंगूठी हमें भेंट में देकर हमपर बहुत एहसान किया है। उसने हमारे आतिथ्य का मूल्य आंका है और यह अंगूठी देकर अपना हिसाब चुका दिया है।"

इस घटना के कुछ समय बाद ईश्वरी बीमार पड़ी। वैद्य ने चिकित्सा की और सलाह दी, "बीमारी तो कम हो गयी, लेकिन किसी भी समय फिर से बीमार पड़ने की संभावना है। शहर में उमानंद नामक एक वैद्य है। अच्छा यही होगा कि आप लोग शहर जाकर उनसे उनकी राय लें।"

"अच्छा ही हुआ। इस बहाने ही सही, हम एक बार शहर जायेंगे और अपने मित्र के यहाँ दो-चार दिन रहेंगे," मोतीराम ने बडे ही उत्साह से कहा।

"अपने मित्र की बात भूल जाइये। हम किसी और जगह पर रहकर अपना काम

करके लौट आयेंगे" ईश्वरी ने बडी रुखाई से कहा।

मोतीराम बहुत ही दुखी होता हुआ बोला "क्या तुम भूल गयी कि उसने हमारा अपने यहाँ स्वागत किया है?"

"उन्होंने हमारा स्वागत क्यों किया है, आप जानते हैं? हमें हीरे की अंगूठी जो दी, उसकी क़ीमत वह हमसे किसी तरह, किसी रूप में ऐंठना चाहता है। अगर हम उसके घर ठहरें तो हमें भी उतनी ही क़ीमती भेटें उसे देनी होंगी। इसलिए हम वहाँ ना ठहरकर अपने योग्य किसी जगह पर ठहरेंगे"। ईश्वरी ने फट बोल दिया।

मोतीराम को पत्नी की बातें ठीक नहीं लगीं। पर करता क्या? इसलिए चुप रह

श्रद्धा से करता । मुझे तो लगता है कि हमारे शहर आने की खबर उमानंद के ज़रिये अब तक उसे पहुँच गयी होगी । मालूम नहीं, यह जानकर उसे कितना दुख हुआ होगा?"

इसपर ईश्वरी ने कहा "अतिथियों के घर ना आने पर खुशी ही होती है क्योंकि उनके आने पर जो असुविधा व खर्च होता है, उससे बच सकते हैं । इसमें कोई भी त्रुटि नहीं निकालेगा । हम उनके घर जाएँ तो फिर उनको हमारे घर आना होगा । एक बार भेंट में क़ीमती हीरे की अंगूठी दी है तो फिर दूसरी बार आने पर कम दाम की भेंट नहीं दी जा सकती है ना? इसलिए आपका दोस्त भी इसी बात पर खुश होगा कि हमारे रिश्ते ऐसे ही टूट जाएँ ।"

गया । वे बाद शहर गये । एक छोटी-सी जगह पर चार दिन रहे और वैद्य उमानंद से चिकित्सा करवायी ।

फिर मदनपुर वापस लौटने के बाद मोतीराम ने पत्नी से कहा "देखा, शहर में हमारी दो सौ अशर्फियाँ खर्च हो गयी हैं । अपने दोस्त सीताराम के घर रहते तो इन अशर्फियों से उसे कोई अच्छी-सी भेंट देते । तुम्हारी मूर्खता के कारण मुझे अपने मित्र से दूर होना पडा । मैं तो कहूँगा कि ऐसा करके हमने सीताराम का अपमान भी किया है । मैंने तो सुना है कि सीताराम, उमानंद का खास दोस्त है । मेरा तो विश्वास है कि सीताराम को उमानंद के पास ले जाते तो और अच्छा होता । तेरी चिकित्सा और

"सीताराम को मैं बचपन से जानता हूँ । जिस किसी भी जगह पर जाता है, वह अपने चाहनेवालों को इसी तरह भेंटें देता रहता है । यह उसकी आदत है । तुम्हें समझाना मेरी समझ के बाहर है" कहता हुआ सीताराम बहुत ही व्यथित हुआ । मोतीराम को मालूम हुआ कि इसके कुछ समय बाद सीताराम पड़ोस के गाँव में आया है, और वहाँ के अतिथि-गृह में रह रहा है । यह जानकर मोतीराम को बहुत ही रंज हुआ और अपने दोस्त से मिलने निकला । किन्तु ईश्वरी ने अपने पति को रोका और कहा "देखा ना, वही हुआ, जैसे मैंने बताया । आपके मित्र की असलियत का पर्दाफ़ाश हो गया ना? अब आप चुप रह जाइये" लेकिन

जब चार दिनों के बाद सीताराम उनके घर आया तो ईश्वरी के आश्चर्य का ठिकाना ना रहा ।

सीताराम ने अपने दोस्त पर दोषारोपण करते हुए कहा "आप लोग शहर आये और मेरे घर नहीं आये, इसपर मुझे बड़ा ही दुख हुआ है ।" फिर ईश्वरी की ओर मुड़कर कहा "यह तो गधा ठहरा । कम से कम तुम इसे समझा सकती थी । जो भी हो, आप लोगों का रुख मुझे अच्छा नहीं लगा, इसीलिए इस बार मैं आप लोगों के यहाँ ठहरने नहीं आया ।"

"हम लोग साधारण स्थिति में आपके घर अवश्य आते, पर मेरी तंदुरुस्ती ठीक नहीं है ना, इसलिए इस हालत में आपके घर आने से हमें संकोच हुआ है" कैफ़ियत तलब करने के अंदाज में ईश्वरी ने कहा ।

"कैफ़ियत देने से कोई फ़ायदा नहीं है । अब आप लोगों को एक बार शहर आना ही पड़ेगा और मेरे घर कम से कम दस दिन ठहरकर जाना पड़ेगा । तभी आप लोगों को क्षमा कर पाऊँगा" सीताराम ने कहा ।

मोतीराम और ईश्वरी ने 'हाँ' के भाव में सर हिलाया । तब सीताराम हँसता हुआ बोला "आप लोग क्या समझते हैं कि मैं आपसे झगड़ा करने आया हूँ । नहीं, बिलकुल नहीं । मैं तो इस तरफ़ आ ही रहा था तो सोचा, अपने मित्र के लिए एक छोटी-सी भेंट लेता जाऊँ " कहते हुए सीताराम को हीरे की एक अंगूठी देकर वहाँ से चला गया ।

ईश्वरी के चेहरे का रंग उड़ गया । सीताराम के घर जाने पर भेंट देनी पडेगी, इसीलिए वह उसके घर नहीं गयी । पर अब सीताराम उसके घर में नहीं ठहरा, फिर भी भेंट देकर चला गया । सीताराम को, भेंटें देना व्यापार नहीं बल्कि वे उसके प्रेम, मित्रता व बंधुत्व के परिचायक हैं, उसके सबूत हैं । अब ईश्वरी की समझ में आ गया है कि सीताराम कितना अच्छा व्यक्ति है । कुछ दिनों बाद अपने पति-समेत सीताराम के घर ठहरने शहर निकल पडी । साथ अच्छे-अच्छे उपहार भी ले गयी ।
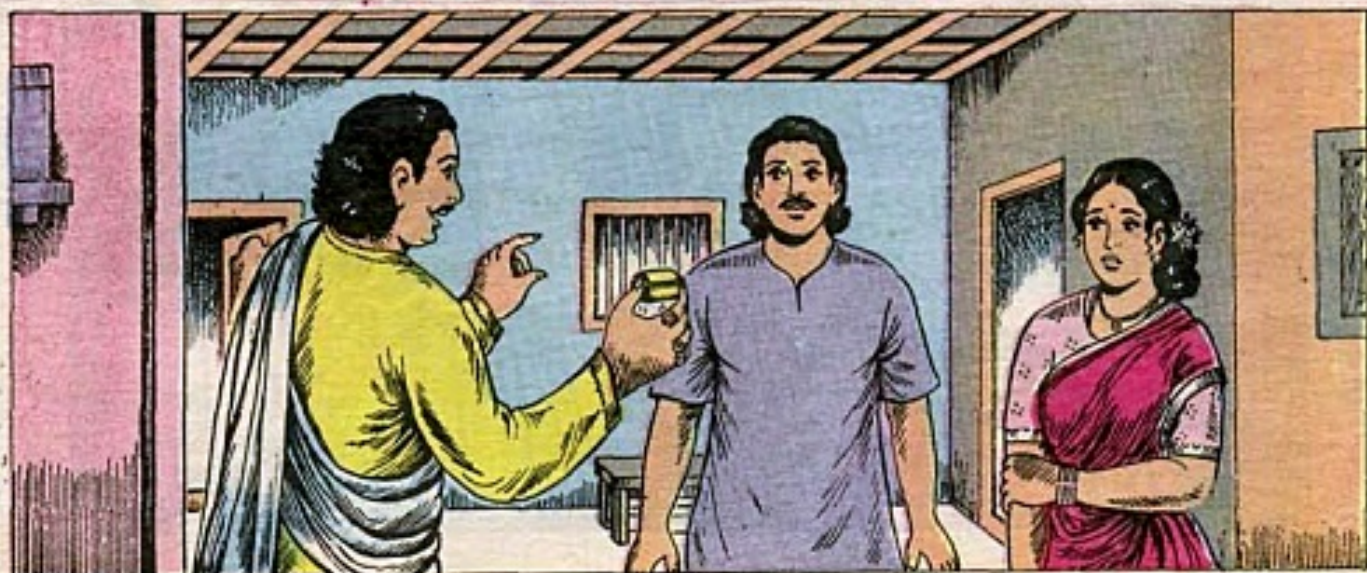
अनुमति-पत्र

हेलापुरी के जंगलों में शिकारियों की संख्या अधिकतर हो गयी। इससे जानवरों की संख्या कम होती जाने लगी। राजा विद्याधर को जब यह मालूम हुआ तो उसने आदेश जारी किया कि अनुमति-पत्र के बिना जंगलों में किसी को शिकार करने का हक नहीं है। अगर किसी ने इस आदेश का उल्लंघन किया तो उसे कड़ी से कड़ी सज़ा दी जायेगी।

एक दिन दो शिकारी जंगल में शिकार कर रहे थे। अकस्मात ही तनकीह के अधिकारियों ने जंगल में प्रवेश किया और उन दोनों शिकारियों से कहा कि राजा की मुहर लगे हुए अनुमति-पत्र उन्हें दिखायें। यह सुनते ही एक शिकारी भागने लग गया। अधिकारियों ने दूसरे शिकारी को वहीं छोड़ दिया और भागते हुए शिकारी के पीछे -पीछे भागने लगे।

जंगल में बहुत दूर भागने के बाद शिकारी अधिकारियों की पकड़ में आ गया। थकावट की वजह से लंबी सांस लेता हुआ, हाँफता हुआ कपड़ों में रखे अनुमति-पत्र को उस शिकारी ने बाहर निकाला और उसे अधिकारियों को दिखाया।

राजा की मुहर लगे हुए उसे अनुमति-पत्र की जाँच के बाद अधिकारियों ने नाराज़ी से उससे कहा "तुमने हमें तो अनावश्यक ही भगाया है। अनुमति-पत्र होते हुए भी इतनी दूर भागने की क्या ज़रूरत थी।" शिकारी ने हाँफते हुए जबाब दिया "मेरे पास अनुमति-पत्र है, पर मेरे दोस्त के पास नहीं।"
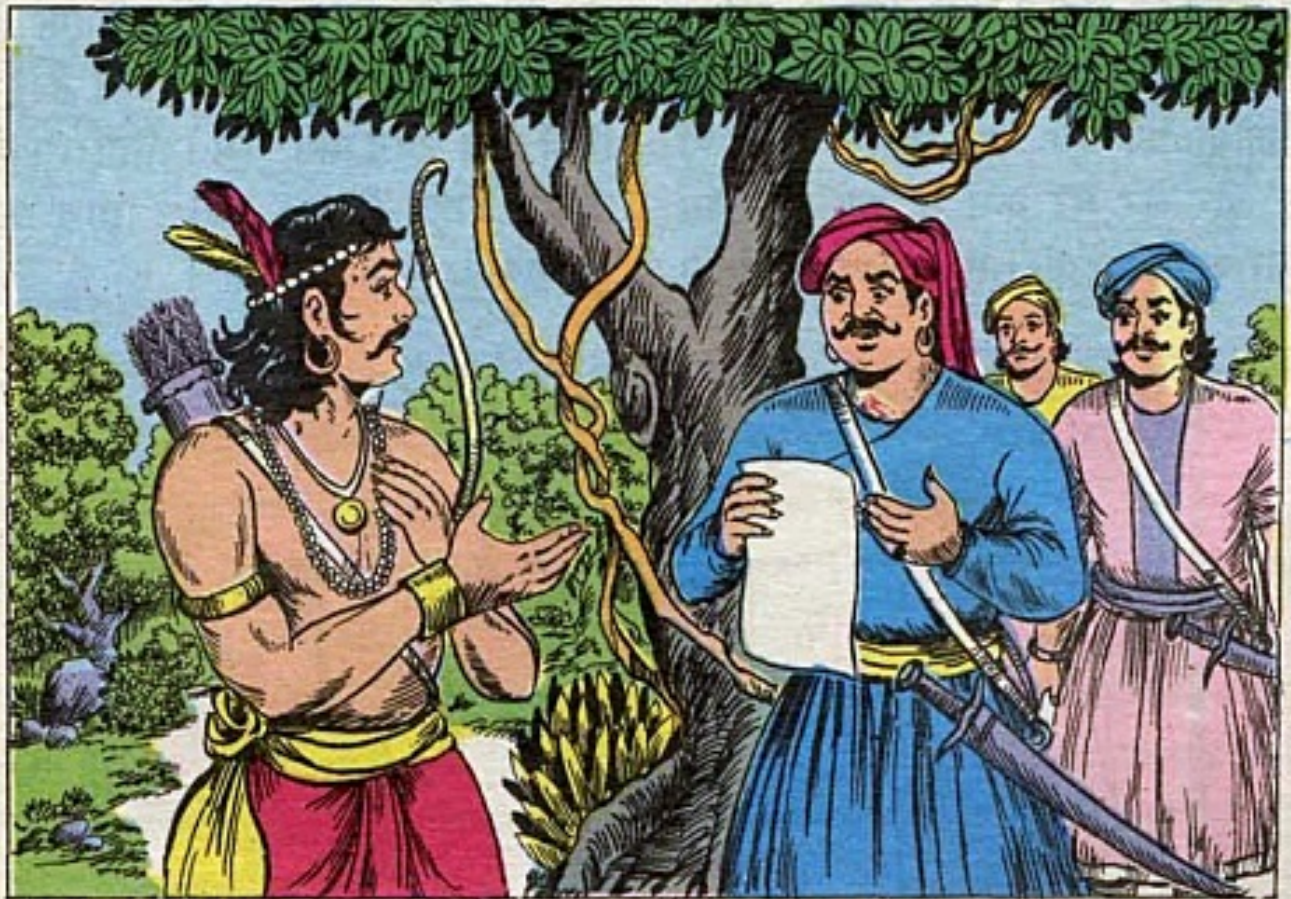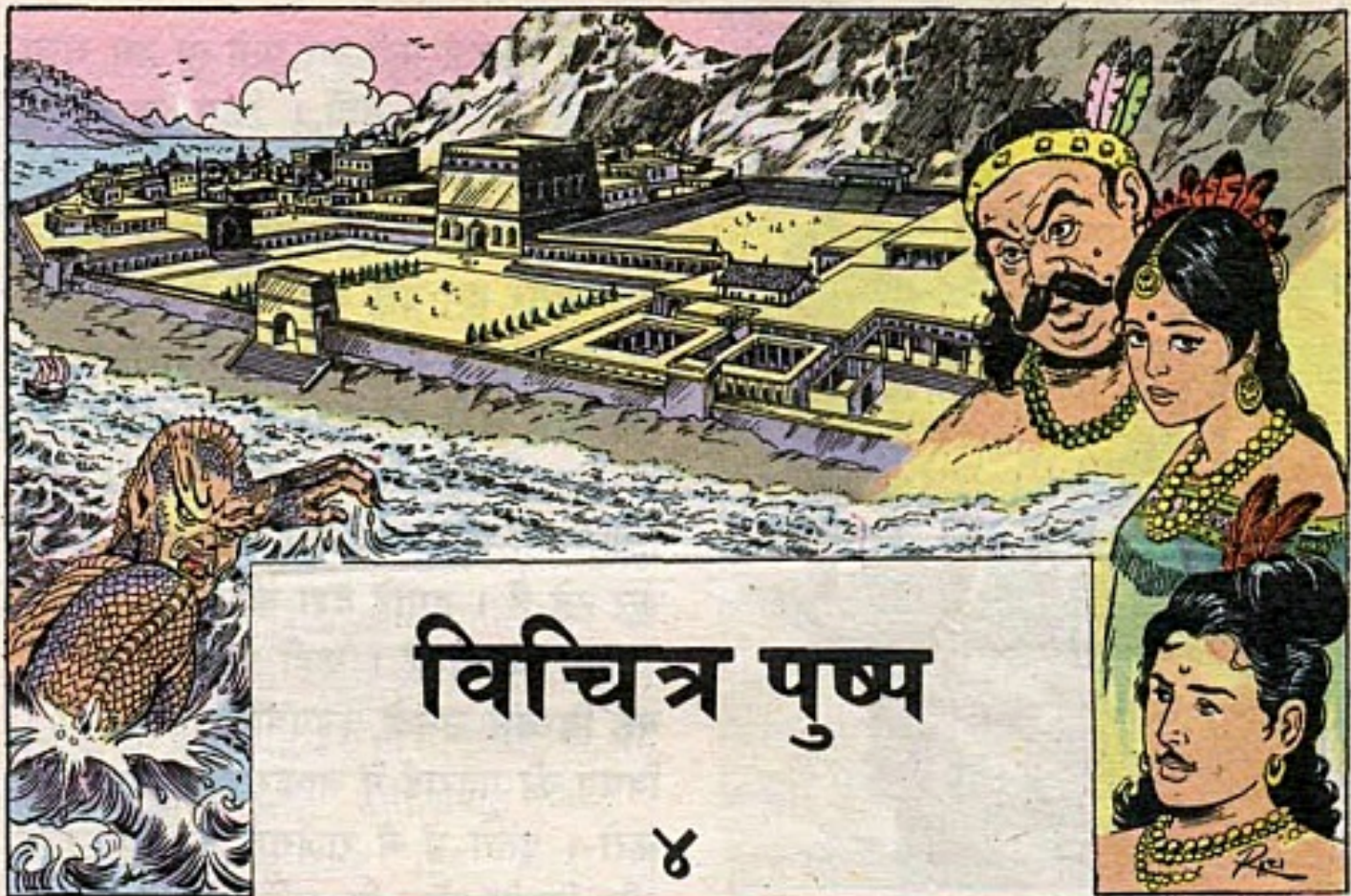
विचित्र पुष्प

४

(माणिक्यपुरी के दक्षिणी प्रांत के समुद्री तट पर स्थित कुछ गाँव अकस्मात ही धराशायी हो गयें, जिसकी वजह से वहाँ की जनता भयभीत हो गयी । अपने प्राणों की रक्षा के लिए उनमें से कुछ लोग राजधानी पहुँचे । राजा, राजकुमारी और सेनाधिपति उनको आश्रय देने के कार्यों में रातों-दिन मग्न हो गये । समुद्री तट से लौटे हुए दलाधिपति ने सेनाधिपति को पूरा विवरण देते हुए बताया कि इस विध्वंस का मूल कारक समुद्र-गर्भ से आधी रात को निकला हुआ वह राक्षस जंतु है, जो देखने में बहुत ही भयंकर है ।)

—बाद

सेनाधिपति गंभीरसिंह सीधे राजप्रासाद पहुँचा । दलाधिपति वीरसिंह ने जो भी बताया, राजा को सुनाया । परी बात सुनने के बाद राजा प्रतापवर्मा ने कहा "क्या कहा? राक्षस जंतु? ऐसे जंतु की बात तो उस युग में की जाती भी, जिसका उल्लेख इतिहास में भी कहीं नहीं किया गया । आश्चर्य की बात तो यह है कि वर्तमान युग में ऐसे राक्षस जंतु के होने की बात की जा रही है । यह असंभव है । जिन लोगों ने इस जंतु को अपनी आँखों देखा है, उनमें से तो कोई भी यहाँ नहीं आया । बस, सैनिकों की बतायी बात को दलाधिपति ने तुम से कहा है । हमें अब गंभीर रूप से सोचना होगा कि इन बातों में कहाँ तक सच्चाई है?"

"हाँ प्रभु, दलाधिपति वीरसिंह ने धराशायी गाँव और घर मात्र देखे हैं, परंतु उस राक्षस जंतु को देखा नहीं है । लेकिन

ऐसा अगर हम नहीं कर पाये तो हम राजा होने के क़ाबिल नहीं । जिस जनता के विश्वास के आधार पर राजगद्दी पर बैठे हैं, उस जनता की रक्षा हमारा परम कर्तव्य है । अगर हम इस कर्तर्य से च्युत हो गये तो हमारे पूर्वज और हमारी होनेवाली संतान हमें माफ़ नहीं करेंगे । तुम तो जानते ही हो कि हमारा राज्य सुसंपन्न है । इस सुसंपन्नता के कारण कुछ देश हमसे ईर्ष्या कर रहे हैं । हमारे देश की शांति में भंग ड़ालना चाहते हैं । कहीं ऐसा ना हो कि यह विध्वंस उनके षडयंत्रों का फल हो । विषय की गहराई में जाकर खूब छान-बीन करो । इतने में मैं राजगुरू को बुलाऊँगा और निर्णय लूँगा कि भविष्य में हमे क्या करना है?''

यह बात तो स्पष्ट है कि उन सारे गाँवों के ध्वंस का कारण प्रकृति का प्रकोप नहीं है बल्कि कोई दूसरा ही प्रबल कारण है । हमारे सैनिकों ने उस राक्षस जंतु को देखने का जो समाचार हमें पहुँचाया है, मुझे लगता है, वह भी निराधार नहीं है । उसे हम बकवास कहकर टाल भी नहीं सकते । अगर आप मुझे अनुमति दें तो मैं स्वयं उस प्रदेश में जाऊँगा और जानूँगा कि असल में वहाँ हुआ क्या है?'' सेनाधिपति गंभीरसिंह ने बड़े विनय से कहा ।

तब राजा ने थोड़ी देर सोचकर बताया ''अच्छा, तुम जाओ । परंतु इतना अच्छी तरह से याद रखना कि हमें किसी भी हालत में जनता को इस विपत्ति से बचाना है ।

'जो आज्ञा' कहकर सेनाधिपति राजप्रासाद की पश्चिमी दिशा की ओर गया, जहाँ शरणार्थी स्त्रीयाँ और पुरुष शरण ले रहे थे । सेनाधिपति को देखते ही सैनिकों ने नमस्कार करते हुए कहा ''सब सुचारू रूप से चल रहा है प्रभू । यहाँ कोई समस्या नहीं है । शरणार्थियों की देख-भाल के लिए राजकुमारी भी अभी-अभी पधारी हैं'' ।

गंभीरसिंह घोड़े से उतरा और दोनों ओर निर्मित पथ्थर के स्तंभों की क़तार के बीच में से होता हुआ विशाल मंडप में प्रवेश किया । तब बग़ल के कमरे से साधारण वस्त्र पहनी हुई राजकुमारी अपनी दो परिचारिकाओं के साथ बाहर आयी ।

सेनाधिपति को देखते ही उसने कहा "यहाँ के लोगों को खान-पान की कोई कमी नहीं है। शिशुओं के स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी ना हो, इसका भी मैंने पूरा ध्यान रखा है। राजवैद्य को भी मैंने जागरूक कर दिया है कि वे इस विषय में सावधान रहें, जिससे शिशुओं के स्वास्थ्य को किसी भी तरह की हानि नहीं पहुँचे।"

"राजकुमारी, आपकी बातों से मैं बहुत ही खुश हुआ। शिशुओं के प्रति आप जो श्रद्धा दिखा रही हैं, बहुत ही प्रशंसनीय है। इस विषय में हम पहले से ही सावधान् रहें, यह बहुत ही आवश्यक है" सेनाधिपति ने कहा।

राजकुमारी ने कहा "यहाँ जितनी भी स्त्रीयाँ है, सब सुखी हैं, लेकिन उन्हें अपने पतियों की बड़ी चिंता लगी हुई है। इसलिए अच्छा होगा कि बहुत ही दूर रहनेवाले वे पुरुष एक बार ही सही, यहाँ आयें और अपनी स्त्रीयों और संतान को देखकर जाएँ।"

"ऐसा ही होगा राजकुमारी। कल शाम तक कुछ लोगों को भेजने का प्रबंध करूँगा" कहता हुआ सेनाधिपति दूसरे शिबिर की ओर गया।

इतने में दलाधिपति वीरसिंह सामने से आया और नमस्कार करते हुए बोला "आज कुछ और सैनिक घायल होकर लौटे हैं। हमारे वैद्य उनकी चिकित्सा में लगे हुए हैं। किन्तु भयभीत वे सैनिक उस राक्षस जंतु के बारे में ही दुहरा रहे हैं।

उनके मुँह से उस राक्षस जंतु के अलावा कोई बात ही नहीं निकल रही है। उनके घावों से भी ऐसा लग रहा है कि ये कोई

शायद माँगनी पडे । जो भी हो, अब मेरे लिए यह ज़रूरी हो गया है मै स्वयं वहाँ जाऊँ और उस राक्षस जंतु के बारे में जानकारी प्राप्त करूँ । अब मैं स्वयं हमारे राज्य के दक्षिणी प्रांत में जा रहा हूँ । तुम्हें भी मेरे साथ चलना होगा । शाम तक पूरी तैय्यारी करना" सेनाधिपति ने आज्ञा दी ।

तब दलाधिपति ने पूछा "क्या सेना को भी हम अपने साथ ले जाएँ ?"

"नहीं, तुम्हारे साथ और तीन सैनिकों का आना पर्याप्त है । लेकिन आज रात को पहरे पर जानेवाले सैनिकों को यथावत् जाने दो । हम अलग ही जाएँगे । हमारी यात्रा की ख़बर किसी तीसरे आदमी को मालूम ना हो" सेनाधिपति ने कहा ।
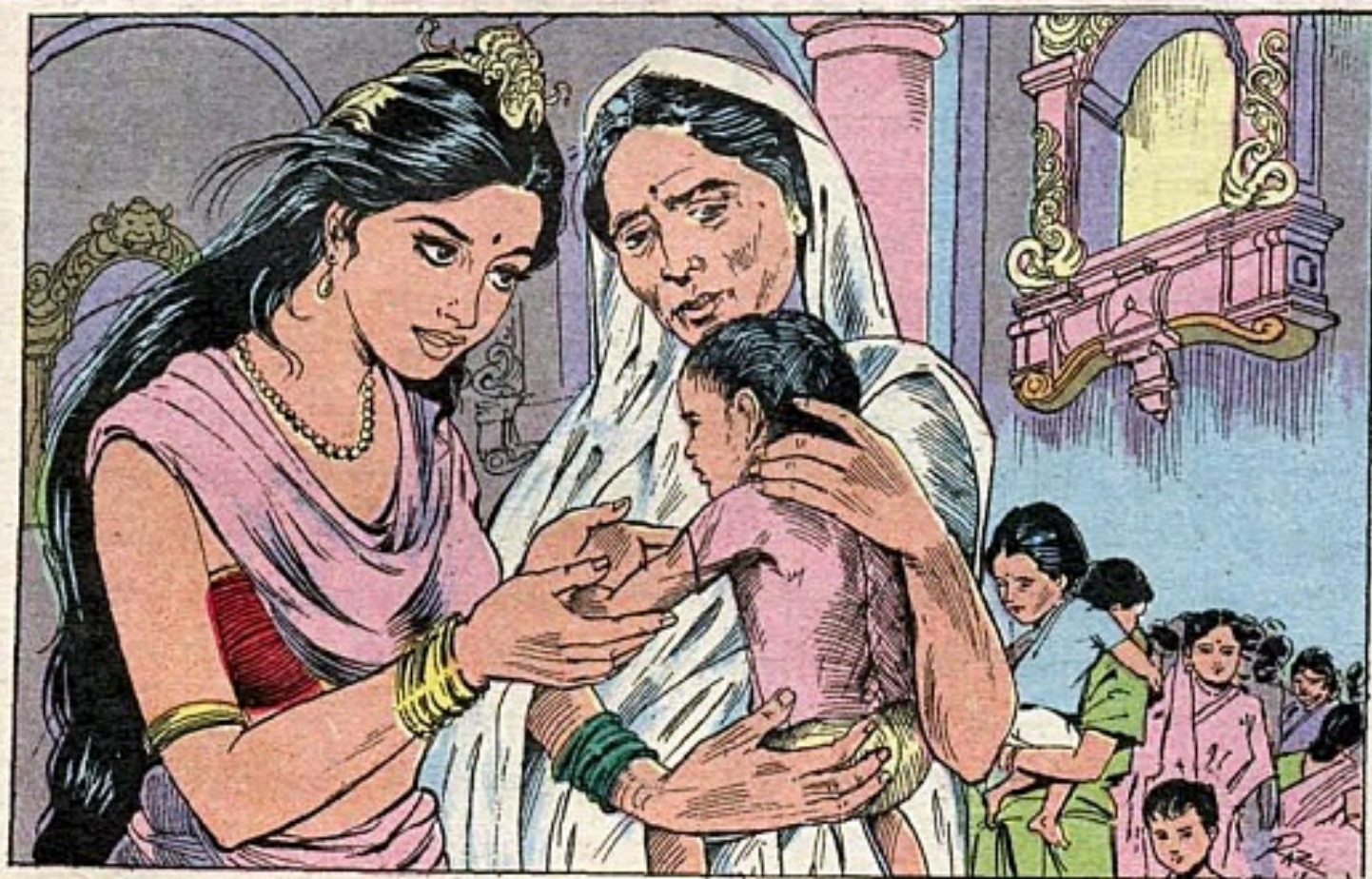
सामान्य घाव नहीं हैं । अवश्य ही किसी जंतु के आक्रमण के ही कारण हुआ है । वे घाव इस बात के सबूत हैं कि उस जंतु में अपार शक्ति है । मुझे तो लगता है कि हमें उन सैनिकों की बातों का विश्वास करना चाहिये । यह उनका भ्रम नहीं, वास्तविकता है । हमें अब पूरी सावधानी बरतनी होगी । हर हालत में उस जंतु के विनाश के प्रयत्न आरंभ कर देना चाहिये । हम चुप्पी साधे रहें तो हमारे राज्य पर ही घोर आपदा आ सकती है ।"

"उनकी बातें अगर सच ही निकलीं तो अवश्य ही हमारा राज्य भयंकर विपित्तियों में फँस गया है । उस राक्षस जंतु का सामना करने के लिए दूसरों की भी सहायता हमें

उस दिन दुपहर को सेनाधिपति, दलाधिपति और तीन सैनिक घोड़ों पर सवार होकर माणिक्यपुरी राज्य के दक्षिणी सरहदों की तरफ़ चल पड़े । शाम तक समुद्री तट पर पहुँचे । वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा कि सारे के सारे गाँव धराशायी हो गये हैं और पेड़-पौधे तक ध्वंस हो चुके हैं । सुनसान उस प्रदेश की रक्षा के लिए नियुक्त सैनिकों ने उनका स्वागत किया । सेनाधिपति और दलाधिपति बिना कुछ बोले उनसे आगे बढ़ गये और समुद्री तट पर बडी तीक्षणता से परीक्षा करने लगे कि किसी के पाँव के निशान कहीं दिखायी दे रहे हैं क्या? कहीं एक जगह पर उन्होंने देखा कि कोई ज़मीन पर घसीट कर ले जायी गयी है । समानांतर दो विशाल

रेखायें भी उन्होंने देखीं। वे रेखाएँ समुद्री जल से प्रारंभ होकर उत्तरी दिशा की ओर बहुत दूरी तक दिखायी पडीं। उन रेखाओं के बीच में कहीं-कहीं कुछ खालीपन भी दिखायी पडा। समुद्री जल के समीप ही, भीगी रेत पर, उन रेखाओं की जगह पर बडे-बडे पैरों के निशान देखकर दलाधिपति ने सेनाधिपति से कहा "अब कोई संदेह नहीं है कि समुद्र में से कोई बहुत बड़ा प्राणी बाहर आया है। यह प्राणी आकार में अवश्य ही हमारी कल्पना के बाहर है।"

"हाँ, तुम्हारी बात मैं मानता हूँ। समुद्र से निकला वह विचित्र प्राणी अवश्य ही फिर से समुद्र के अंदर ही चला गया होगा। क्या तुमने इस पर ध्यान दिया कि ये रेखाऐं केवल उत्तरी दिशा की ही ओर गयी हैं?" सेनाधिपति ने पूछा। 'हाँ प्रभू' कहकर दलाधिपति तीक्षणता से संपूर्ण समुद्री तट की खोज करने लगा कि कहीं कोई और निशान दीखेंगे क्या? थोड़ी देर में अंधेरा हुआ। कुछ भी स्पष्ट नहीं दीख रहा था। उन्होंने निश्चय किया कि जो सैनिक पहरा दे रहे हैं, उनसे थोड़ी और दूरी पर वे अपना पड़ाव डालेंगे। उन सैनिकों को भी इसकी खबर नहीं थी।

आधी रात गुज़री। एक तरफ समुँदर और दूसरी तरफ़ विशाल रेतीला मैदान। आकाश में कहीं-कहीं टिमटिमाते हुए नक्षत्रों के अलावा और कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था। सेनाधिपति गंभीर सोच में पड़ गया कि यह हो क्या रहा है? उसने निश्चय तो कर लिया "यह प्रकृति का प्रकोप नहीं, इसमें किसी भी शत्रु का षड़यंत्र भी नहीं है। अवश्य ही कोई विचित्र बात हैं, जो किसी की समझ के बाहर है। यह बात यहीं समाप्त हो जाए तो ठीक है। अगर ऐसा ना होकर राज्य भर के लिए गंभीर समस्या बन जाए तो उस समस्या के हल के लिए अभी से कटिबद्ध होना होगा। राजा भी बहुत ही चिंतित हैं। सेनाधिपति होने के नाते राज्य की सुरक्षा का भार मुझपर है, और अवश्य ही मैं जी-जान से उसकी सुरक्षा के लिए लड़ूँगा।"

चौथे पहर के आरंभ होते ही सेनाधिपति ने देखा कि उत्तरी दिशा में काले पहाड़ की तरह कोई एक आकार हिल रहा है। उसे

पूरब में जब सूर्य उदित हो रहा था तब वह राक्षस जंतु समुद्र के गर्भ में अदृश्य हो गया ।

सेनाधिपति को, चलते हुए पर्वत के आकार के उस राक्षस जंतु को देखकर लगा कि कोई भी मानव उसका मुक़ाबला करने का साहस नहीं करेगा । अब यह भी साबित हो गया कि वह विचित्र जंतु आधी रात को ही समुद्र से बाहर आता है और उत्तरी दिशा की ओर जाता है । फिर सबेरा होते-होते सूर्योदय के साथ-साथ वह वापस आता है और समुद्र में डूब जाता है । चूँकि उसका मुक़ाबला असंभव है, इसलिए उसने उन तीनों सैनिकों को राजधानी वापस चले जाने की आज्ञा दी, जो उसके साथ आये थे । पहरा देने के लिए पहले ही आये हुए सैनिकों का कोई पता नहीं । सेनाधिपति समझ गया कि वे सैनिक उस राक्षस जंतु के पैरों तले दब गये होंगे ।

धीरे-धीरे उन्हीं की तरफ़ बढ़ते हुए देखकर दलाधिपति को भी दिखाया । वह धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था । इधर-उधर हिलता हुआ उसका सर पेड़ों के ऊपर से दीख रहा था । वह जब और आगे बढ़कर आया तो उसका भीकर रुप और स्पष्ट दिखायी देने लगा । ताड़ के पेड़ों के जैसे उसके पाँव थे, अजगर जैसे उसके हाथ थे । उस राक्षस जंतु के भयंकर रूप ने सेनाधिपति के दिल को भी दहला दिया ।

सेनाधिपति और दलाधिपति ने उस राक्षस जंतु के मार्ग में कोई अड़चन नहीं डाली । वे उसके रास्ते से हट गये । सौभाग्यवश सैनिक भी उसके पैरों के नीचे दब जाने के भय से हट गये ।

"प्रभु, उस राक्षस जंतु का सामना करके अपने और सैनिकों के प्राण खो बैठना कतई विवेक नहीं होगा । इससे तो अच्छा यही होगा कि हम उस राक्षस जंतु को, शहर में घुसकर सर्वनाश करने के पहले, रोकने की कोशिश करें, और सावधानी बरतें" दलाधिपति ने निवेदन किया ।

"हाँ, तुमने बिलकुल ठीक कहा है । हमें अब सोचना चाहिये कि किस उपाय से हम उसे शहर में घुसने से रोक पायेंगे । इसके लिए हमें काई योजना बनानी पड़ेगी । अगर

संभव हुआ तो उसके नाश का रास्ता भी हमें ढूँढ़ना होगा । हमें तुरंत राजधानी पहुँचकर राजा को इसका समाचार देना होगा ।" कहते हुए सेनाधिपति घोड़े पर सवार हुआ । दलाधिपति भी जब घोड़े पर सवार हुआ, तब दोनों बडी तेज़ी से निकल पड़े और राजधानी पहुँचे ।

सेनाधिपति जब राजप्रासाद पहुँचा तब महाराज प्रतापवर्मा राजगुरु गौरीनाथ से परामर्श कर रहा था । उसने जैसे ही सेनाधिपति को देखा, पूछा "क्या तुमने उस विचित्र जंतु को देखा है?" उसके सुर में बड़ी ही अतुरता थी ।

"देखा है महाराज । सैनिकों की बातों में कोई अतिशयोक्ति नहीं है । वह निश्चय ही राक्षस जंतु ही है ।" फिर सेनाधिपति ने दक्षिणी समुद्र के तट पर देखा हुआ सारा वृत्तांत सविस्तार बताया और कहा "वह राक्षस जंतु आधी रात को समुद्र-गर्भ से ऊपर आता है और सीधे उत्तरी दिशा की ओर जाता है । सबेरा होते-होते फिर से समुद्र में विलीन हो जाता है । उसको मारने की शक्ति हममें से किसी में नहीं है ।"

राजा को रास्ता सूझ नहीं रहा था कि इस आकस्मिक विपत्ति से राज्य को कैसे बचायें? वह सोचने लगा" सेनाधिपति की बातें सुनने पर लगता है वह कोई सामान्य जंतु नहीं है? इस जंतु की शक्ति का अंदाज़ा लगाना भी मुश्किल लग रहा है । पर हर हालत में उस जंतु का नाश अवश्यंभावी है । ऐसा ना होने पर राज्य में अशांति फैल जायेगी ।" चिंताग्रस्त राजा को देखकर सेनाधिपति भी सोच में पड़ गया । तब राजगुरू ने कहा "महाराज, चंद्रकेतु कुलश्रेष्ठ पुजारी से शाप-ग्रसत हुआ है। मेरा संदेह है कि वही चंद्रकेतु इस रूप में प्रकट होकर संचार कर रहा है । बहुत ही कम मात्रा में विकसित होनेवाले 'शताब्दिका' पुष्प हमारे राज्य की उत्तरी दिशा में ही हैं । उस विचित्र पुष्प के लिए ही राक्षस जंतु के रूप में जीवित चंद्रकेतु, उस ओर शायद आकर्षित हो रहा है । इसलिए इस स्थिति में वे 'शताब्दिका' पुष्प ही हमारी रक्षा कर पायेंगे ।"

"भला वे विचित्र फूल हमारी कैसी रक्षा कर पायेंगे, जिनके बारे में आपने कहा था

कि वे हमारे लिए नष्टदायक हैं। यह कैसे संभव हो सकता है गरुदेव?" राजा ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा।

"कुलश्रेष्ठ पुजारी से शपित चंद्रकेतु अब इस भूमि पर रह नहीं सकता। उसे, वे विचित्र पुष्प ही माणिक्यपुरी की ओर आकर्षित कर रहे हैं। अगर हम उन विचित्र पुष्पों को, उस राक्षस जंतु-मेरा उद्देश्य चंद्रकेतु से है, उन के निवास-स्थल समुद्र में पहुँचाएँ, तो उस नर राक्षस के इस ओर आने के ख़तरे से हम बच सकते हैं ना? अब तो देखना यह है कि यह साहसपूर्ण कार्य आप में से कौन कर सकता है?" राजगुरू ने यों सवाल किया।

गुरुदेव की इन बातों को सुनने पर राजा को श्रृंगमाय पर्वतों के निवासी उत्तुंग जाति के लोगों का स्मरण आया। वसंतोत्सव पर आकर विविध स्पर्धाओं में विजय प्राप्त करनेवाले युवक उत्तुंग और उसके दोस्तों की याद उसके स्मृति-पटल पर अकस्मात आयी। उसे यह भी याद आया कि उन लोगों ने उसे अपने यहाँ आने के लिए उसका स्वागत भी किया है। उन विचित्र पुष्पों को राजकुमारी को भेंट में देनेवाला भी उत्तुंग ही है, इसलिए राजा ने यह समुचित समझा कि इस कार्य को उत्तुंग को सौंपना ही उत्तम होगा। उसे लगा कि इस आपदा को टालने का यही एक रास्ता है। फ़ौरन अपना सर हिलाते हुए सेनाधिपति की ओर घूमते हुए राजा ने उससे कहा "मैं अपने राज्य की रक्षा के लिए कल ही श्रृंगमाय पर्वत जा रहा हूँ। मेरे साथ दलाधिपति वीरसिंह आया तो काफ़ी होगा।" फिर राजगुरू को संबोधित करते हुए बोला "गुरुवर, आप आशीर्वाद दीजिये कि मेरी यात्रा सफल हो।" कहते हुए आशीर्वाद के लिए अपना सर झुकाया।

"तुम्हारा निर्णय नितांत उचित है। राजन्, राज्य की रक्षा के लिए अपने प्राणों की भी बलि चढ़ाने के लिए सदा सन्नद्ध उत्तुंग जाति के वीरों से अवश्य ही तुम्हारे लक्ष्य की पूर्ति होगी। लैरंबीमाता के आशीर्वाद सदा तेरे साथ हों और वह तुम्हारी प्रजा की रक्षा करती रहे" यों कहते हुए राजगुरू ने आशीर्वाद दिया। —सशेष

अजेय की हार

धुन का पक्का विक्रमार्क पेड़ के पास फिर गया और पेड़ से शव को उतारकर अपने कंधों पर डाल लिया । पहले की ही तरह चुप्पी साधे श्मशान की ओर बढ़ा । तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, तुम एक देश के विख्यात सम्राट हो । निर्भय होकर आधी रात को श्मशान में अनेकों कष्ट झेलते हुए अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अथक परिश्रम कर रहे हो । तुम्हारी इस दयनीय स्थिति को देखकर मेरा हृदय दया और करुणा से पसीज रहा है । तुमसे मेरी पूरी सहानुभूति है । आशाओं के बंधन में बंध जाने पर कहा जाता है कि उससे छुटकारा पाना असाध्य कार्य है । पंडित और ज्ञानी भी इस तथ्य को स्वीकार करते हैं । तुम तो जानते ही हो कि मनुष्य का हृदय प्रलोभनों का निवास-स्थल है । यह बात सच है कि तुममें अपने लक्ष्य की सिद्धि का आग्रह है, सहनशक्ति है, संयमी

बेताल कथा

हो, तुममें मानसिक शांति विराजमान है । परंतु मुझे शंका हो रही है कि जिस कार्य को तुम साधना चाहते हो, वह आखिरी क्षण किसी प्रलोभन के शिकंजे में आ जायेगा और तुम अपने सारे सद्‌गुणों को त्याज दोगे । इस विषय में तुम सावधान रहो, सचेत रहो, इसके लिए एक वेदांती और तपोशक्ति से संपन्न अजेय नामक एक युवराज की जीवन-गाथा सुनाऊँगा, जो राज्य की आकांक्षा के प्रलोभन में कितने गहरे गर्त में गिर गया ।" और उसने यों कहा ।

अरुणगिरि के महाराज विक्रमसेन के अजेय और विजय नामक दो पुत्र थे । पहले से ही अजेय का स्वभाव एक वेदांती का स्वभाव था । पर विजय का स्वभाव बिलकुल ही इसके विपरीत था । उसमें राजा बनने की असीम आकांक्षा थी ।

सोलह साल की उम्र में ही अजेय सर्व विद्‌याओं में पारंगत हुआ । पिता ने चाहा कि उसे युवराज घोषित करूँ । इसपर विजय ने आपत्ति उठायी और अपने पिता से कहा "हो सकता है, अजेय उम्र में मुझसे बड़ा हो, परंतु राज्य-पालन की योग्यता उसमें है नहीं । उसकी प्रवृत्तियाँ एक वेदांती की प्रवृत्तियाँ हैं । जीवन को वह एक दार्शनिक की तरह परखता है ।"

उस समय वहीं उपस्थित अजेय ने कहा "जनक राजा वेदांती ही थे, किन्तु उन्होंने शासन की बागड़ोर बडी खूबी से संभाली । कुशल और सफल शासक कहलाये गये । अच्छा यही होगा, वेदांत का एक थोड़ा सा अंश ही सही, तुम भी जानो ।" "कोई भी बात थोडा-थोडा जानने की इच्छा मैं नहीं रखता और ऐसा करना मुझे अच्छा भी नहीं लगता । तुममें वेदांती होकर भी राज्य की आकांक्षा जीवित है । अब तुम्हीं कहो कि इस आकांक्षा के होते हुए तुम कैसे वेदांती का दंभ भरते हो?" विजय ने बडी ही निष्ठुरता से अजेय से कहा ।

इसपर अजेय हँसा और बोला "क्या कभी मैने यह दंभ भरा है कि मैं वेदांती हूँ, तुम्हीं ने मुझे वेदांती कहा और तुम्हीं कह रहे हो कि मैं वेदांती हूँ ही नहीं । तुम तो कह रहे हो कि मुझमें राज्य की आकांक्षा है । पिता श्री मुझे युवराज बनाना चाहते हैं । इसमें

तुम रुकावट क्यों डाल रहे हो?"

राजा विक्रमसेन ने विजय की भुजा थपथपाते हुए कहा "पुत्र, बातों में तुम अजेय को जीत नहीं सकते। मेरी तो यही हृदय-पूर्वक इच्छा है कि तुम दोनों राम-लक्ष्मण की तरह परस्पर एक दूसरे से प्रेम करो। राज्य की आकांक्षा तुम्हारे लिए उचित नहीं है। क्योंकि बड़े का राजा होना न्यायसंगत व रीतिबद्ध है। सदा से चला आता हुआ संप्रदाय भी है।"

"मुझे सामर्थ्य पर ही विश्वास है ना कि संप्रदाय पर" विजय ने उत्तर दिया।

इसपर अजेय ने कहा "तुम्हें संप्रदाय पर अवश्य ही थोडा-सा विश्वास है, इसीलिए युवराज बनने के लिए मुझसे स्पर्धा कर रहे हो। अगर तुम सचमुच सामर्थ्य में ही विश्वास रखते हो, तो हमें देश के समस्त युवकों से होड लगानी होगी।"

विजय को मालूम नहीं हुआ कि अजेय के इस सवाल का क्या जवाब देना है? उसका चेहरा एकदम फ़ीका पड़ गया। अजेय ने भाई की पीठ थपथपायी और कहा "इसीलिए तो मैने तुमसे कहा था कि थोड़ा ही सही वेदांत सीखो। इससे तर्क का ज्ञान होता है।"

विजय चिढ़ते हुए बोला "राजा को बाहुबल की नितांत आवश्यकता है, तर्क की नहीं। तर्क के लिए मंत्री तो होंगे ही। युद्ध-विद्या में मैं तुम्हें हरा सकता हूँ। इस परीक्षा के हो जानेपर बडे ही निर्णय करें

कि किस में राजा बनने की काबिलियत है?"

अजेय ने विजय के प्रस्ताव को स्वीकार किया। परंतु विजय सब विद्याओं में निष्णात नहीं था। इसलिये अजेय ने ही प्रस्ताव रखा कि स्पर्धा और दो वर्षो के लिए स्थगित की जाए।

इन दो वर्षों में विजय ने बहुत ही परिश्रम किया। समस्त युद्ध-विद्याओं में पारंगत हुआ। गुरुओं ने उसकी भरपूर प्रशंसा की। बाद एक दिन अजेय से स्पर्धाओं में भाग लिया। पर उसके हाथों में बुरी तरह से हार गया। अपना आश्चर्य प्रकट करते हुए विजय ने अजेय से कहा "युद्ध-विद्याओं में तुम इतने निष्णात हो, पारंगत हो, तब मैं कैसे विश्वास करूँ कि तुममें राज्य की

मैं किसी दिन राज-द्रोह कर बैठूँ । भाई में तो राज्य का मोह नहीं है तो पिताश्री मुझे क्यों राजा नहीं बनाना चाहते?"

"राजद्रोह करोगे तो अवश्य ही मरणदंड तुम्हें भुगतना होगा । व्यर्थ ही अपने प्राणों से खिलवाड़ मत करो । दो भाइयों में जो अग्र होता है, उसे ही राजा बनने की योग्यता होती है ।" महारानी ने यों कहकर उसे समझाने का प्रयत्न किया । परंतु विजय ने हठ किया "ऐसा कभी नहीं होगा । अब सेना में बहुत से लोग मेरे ही पक्ष में हैं । सेनाधिपति संदिग्धावस्था में हैं । उसका मन डाँवाडोल हो रहा है । कितने ही मित्र मुझे बहुत चाहते हैं । अगर राजद्रोह पर मैं तुल गया तो नित्संदेह मैं ही राजा बनूँगा । भैया हारेंगे और उन्हें जंगलो में जाना पड़ेगा ।"

बेटे की इन बातों से वह धबरा गयी और अपने पति को बुलाकर पूरा-पूरा बता दिया । विक्रमसेन को जब मालूम हुआ कि उसका बेटा सिंहासन पर आसीन होने के लिए साज़िश कर रहा है तो उसके क्रोध का छोर ना रहा । उसने दोनों बेटों को बुलाया और विजय को बताया कि वह राजद्रोह करेगा तो उसे कड़ी से कड़ी सज़ा मिलेगी । अजेय ने अपने पिता को ऐसा ना करने की प्रार्थना की । उसने अपने पिता से निवेदन किया "पिताश्री, आप चिंतित ना होइये । विजय के कार्यकलापों को मैं छिपे-छिपे देख रहा हूँ और सुन भी रहा हूँ । विजय जिस-जिस से मिलता रहा, उन सबसे मैं भी मिल रहा

आकांक्षा नहीं है?"

"सामर्थ्य, निस्वार्थता, वेदांत-पद्धति-ये तीनों जब समान भागों में मिश्रित होते हैं तभी कोई भी आदर्श शासक बन सकता है । मुझमें राज्य की आकांक्षा नहीं है, किन्तु मैं राजा बनूँगा तो पिताश्री को आनंद होगा । प्रजा भी सुखी होगी । इसीलिए मैं राजा बनना चाहता हूँ" । अजेय ने कहा ।

विक्रमसेन ने अंतिम निर्णय ले लिया कि अजेय को ही राजा घोषित करूँगा । विजय ने फिर से आपत्ति उठायी । पिताने उसकी आपत्ति की परवाह नहीं की । तब वह अपनी माताश्री के पास गया और बोला "माताश्री, मुझमें राजा बनने की तीव्र इच्छा है । अगर मेरी इच्छा पूर्ण नहीं हुई तो हो सकता है,

हूँ। चूँकि वे विजय का विरोध करने से ड़र रहे हैं, उसके सामने उसका साथ देने का झूठा वादा कर रहे हैं। लेकिन वे लोग तो यही चाहते हैं कि मैं ही राजा बनूँ। आप भाई को क्षमा कीजिये।" "लेकिन इसमें राज्य हस्तगत करने की असीम आकांक्षा है। सज़ा दिये बिना इसे छोड दूँगा तो किसी दिन कोई विंपत्ति अवश्य खड़ी कर देगा" विक्रमसेन ने कहा।

उत्तर में अजेय ने कहा "मुझमें सचमुच राज्य की आकांक्षा नहीं है। आप विजय को राजा बनाइये और एक वर्ष तक उसे राज्य का भार संभालने का अवकाश दीजिये। प्रजा उसका शासन स्वीकार करेगी तो उसे ही राजा बना सकते हैं। तब मैं आनंद से जंगल चला जाअँगा और तपस्या करूँगा।"

अनिच्छापूर्वक ही विक्रमसेन ने ऐसा करने के लिए अपनी स्वीकृति दी। विजय ने एक साल तक शासन सुचारू और सुव्यवस्थित रूप से चलाया किया और काफ़ी प्रसिद्धि भी प्राप्त की।

इस स्थिति में अजेय ने एक सभा बुलायी और अपना अभिप्राय बताया "मैंने साबित किया है कि विजय अच्छा शासक है। अब मैं उसे ही राज्य सौंपना चाहता हूँ और जंगल चले जाने की इच्छा रखता हूँ।"

सभा में आये सबों ने मुक्तकंठ से घोषणा की कि अजेय ही को शासक होकर शासन चलाना चाहिये। उन्होंने कहा "विजय के पीछे अजेय के होने पर ही उसके सामर्थ्य में चार चाँद लग सकते हैं। उसकी अनुपस्थिति में विजय समर्थ शासक हो ही नहीं सकता, अतः अजेय से बढ़कर समर्थ व्यक्ति राज्य-भर में ढूँढने पर भी नहीं मिलेगा।"
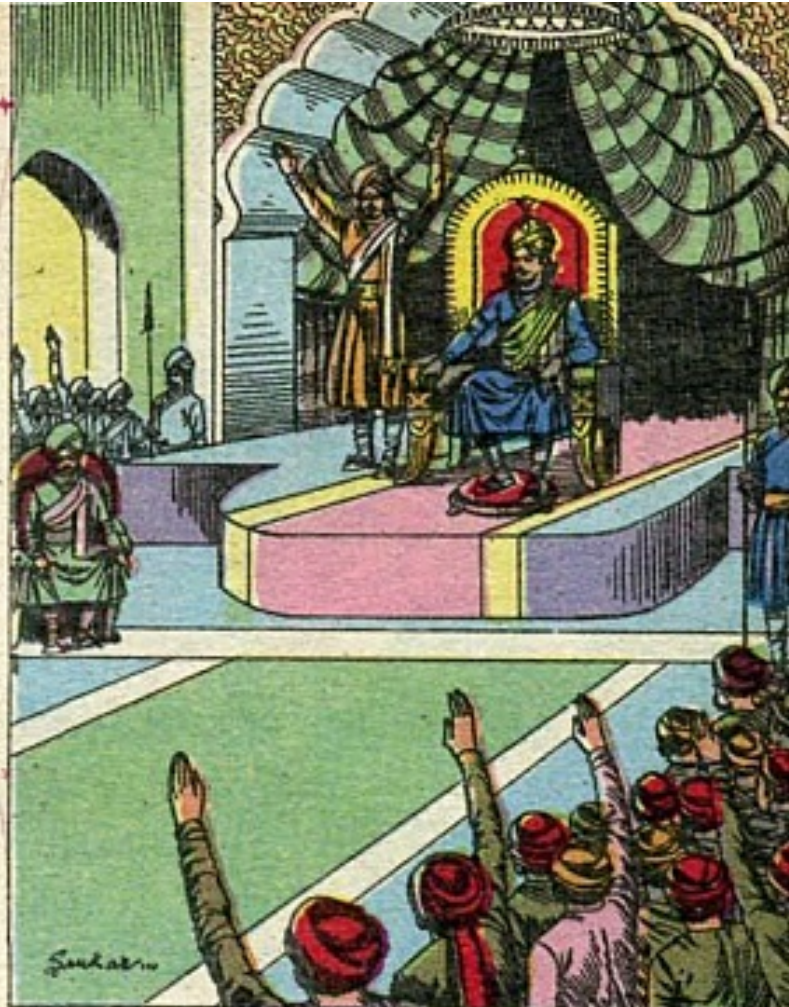
तब अजेय ने उनसे कहा "मैं ही इस राज्य का राजा हूँ। विजय केवल मेरा प्रतिनिधि बनकर यहाँ रहेगा। मैं जंगल जाऊँगा और तपस्या करके अतींद्रिय शक्तियाँ उपलब्ध करके हमारे देश की रक्षा करता रहूँगा। विजय के शासन में कोई त्रुटि हो या उसकी वजह से किसी को असुविधा हुई हो तो न्याय के लिए मेरे पास आ सकता है।" उसने यह भी कहा कि यह मेरा अंतिम निर्णय है।

विजय राजा बन गया। पर इससे वह तृप्त नहीं हुआ। सारी प्रजा यही मानती है कि वह केवल अजेय का प्रतिनिधि है। उसने सोचा, स्वतः अजेय महान शक्तिमान है। अगर इसके साथ तपोबल भी जुड़ गया तो अवश्य ही मेरे लिए खतरनाक साबित होगा। विजय के मन में दिन ब दिन यह शंका दृढ़ होती गयी। उसने पहले जेल से कुछ ख़तरनाक क़ैदियों को रिहा कर दिया और उन्हें हुक्म दिया कि वे जंगल में जाकर अजेय को मार डालें। वहाँ जाने के वाद वे अजेय की तपोशक्ति व उसके धार्मिक प्रवचनों से अति प्रभावित हुए। उनमें अब परिवर्तन आ गया और वे अजेय के शिष्य बन गये। अपनी इस असफलता से विजय ने अपनी हार नहीं मानी। इस बार अग्रज का तपोभंग करने के लिए उसने अप्सराओं से भी अधिक अति सुँदर कन्यायें भेजीं। अजेय ने उनका विवाह अपने शिष्यों से रचाया और अनुज को समाचार भेजा कि मेरे यहाँ और भी अविवाहित शिष्य हैं, इसलिए और कन्यायें भेजो, जिनसे मैं इनका भी विवाह कर सकूँ।

विजय समझ गया कि मैं अजेय का कुछ बिगाड़ नहीं सकता। जनता अजेय के मुक़ाबिले में उसे नहीं के बराबर समझती है। इसलिए उसने राज्य में मुनादी पिटवा दी कि वह अजेय का प्रतिनिधि नहीं, बल्कि इस देश का राजा है।

उसकी इस घोषणा का, कुछ मंत्री, राज-प्रतिनिधि और राज- कर्मचरियों ने विरोध किया। विजय ने उन सबको राज्य से बहिष्कृत कर दिया। वे सब जंगल में अजेय के पास चले आये। अजय ने उनसे कहा "मैं विजय के राज्य-शासन में हस्तक्षेप नहीं करूँगा। अगर आप लोग उसकी शासन-पद्धति से सहमत नहीं हों, तो आप लोग यहीं रह सकते हैं।"

धीरे-धीरे विजय का शासन अत्याचारी होता गया। इसलिए राज्य छोडकर जंगल जानेवालों की संख्या में वृद्धि होती गयी। अजेय ने उन सब को आश्रय दिया। इतनी बडी संख्या में आये लोगों की देखभाल करना कोई मामूली बात नहीं थी। अजेय ने अपनी तपोशक्ति से एक अमोघ वटवृक्ष

की सृष्टि की, जिसके द्वारा वह जो चाहे, उसे मिल जाए ।

एक दिन विजय कुछ सेनिकों को लेकर जंगल में अग्रज के पास आया और बोला "यहाँ तुम अपराधियों को आश्रय दे रहे हो । तुम पर राजद्रोह का आरोप लगाया जा रहा है । इस आरोप का तुम क्या उत्तर दोगे?"

अनुज के इस आरोप पर अजेय बहुत ही क्रोधित हुआ और बोला "मैं ही इस देश का राजा हूँ । मुझे तुम्हारे इन आरोपों का उत्तर देने की कोई आवश्यकता ही नहीं है । तुम तक्षण ही राज्य छोड़कर चले जाओ ।" विजय ने अपने सैनिक-बल से अजेय और उसके आश्रित लोगों को कैद करना चाहा । इसपर वह घबराया नहीं । उसने वटवृक्ष की ओर देखकर केवल एक चुटकी बजा दी तो उस वृक्ष की शाखाओं व जटाओं से असंख्य सैनिक निकल आये और उन्होंने विजय के साथ-साथ उसके सैनिकों को भी बाँध दिया ।

तब अजेय ने बडे आनंद से सिर हिलाया और आज्ञा दी "यह विजय देशद्रोही है । इसे देश की सरहदों के उस पार छोडकर आओ ।"

इस धटना के बाद अजेय ने जंगल छोड़ दिया । राजधानी पहुँचा और राज्याभिषेक करके स्वयं अरुणगिरि का राजा बन गया ।

बेताल ने विक्रमार्क को यह कथा सुनायी और कहा "राजन, अजेय वेदांती, संयमी और शांतगुणी है, पर उसके व्यवहार में,स्वभाव में जो इतना बडा परिवर्तन हुआ है, क्या उसका कारण स्वयं राजा बनने का प्रलोभन नहीं? उसने कितनी ही बार विजय

के दुर्व्यवहार को क्षमा कर दिया । जिस अनुज ने उसे हानि पहुँचानी चाही, उसे बड़ी ही आसानी से बंदी बना दिया । इतना सब कुछ करनेके बाद भी अनुज को राज्य से बहिष्कृत करना और राज्य-सिंहासन पर स्वयं राजा बनकर आसीन होना प्रलोभन नहीं तो और क्या है? इस स्वार्थतापूर्ण कार्य के कारण क्या उसके सारे सद्गुण मिट्टी में नहीं मिल गये? क्या यह अजेय की पराजय नहीं? इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी अगर तुम मौन ही रह गये तो तुम्हारा सिर चकनाचूर हो जायेगा ।"

विक्रमार्क ने कहा "सामान्य व्यक्तियों की तुलना स्वार्थ, प्रलोभन व क्रोध जैसे तामसिक गुणों से परे ज्ञानियों की करना लोकज्ञान नहीं कहलाता । उनका खंडन अथवा उनकी प्रशंसा भी लोकज्ञान नहीं कहलाता । कभी-कभी विवेकी और ज्ञानी को अपनी भलाई भुलाकर, जनता की भलाई के लिए बहुत ही कठोरता से व्यवहार करना पड़ता है । परिस्थिति को मद्देनज़र रखकर जो ऐसे व्यवहार से विमुख होता है, उसे अपने को विवेकी या ज्ञानी कहलाने का अधिकार नहीं । प्रारंभ में विजय की राज्य-आकांक्षा केवल वैय्यक्तिक थी किन्तु जब वह राजा बना, तो उसे भ्रम हुआ कि उसका भाई उसके रास्ते में रुकावट है, इसलिए वह अपनी प्रजा पर आत्याचार करने लगा । अजेय ने बहुत प्रतीक्षा की और ज्ञान गया कि भाई में परिवर्तन नहीं होगा तो उसने देश से उसका बहिष्कार किया ।

राजद्रोह राज-परिवार, राज-बंधुओं और उनके आश्रितों तक ही सीमित है । लेकिन विजय अपनी ही प्रजा का शत्रु बना, और देशद्रोह करने पर तुल गया । राज्य राजा से भी उन्नत और पवित्र है । यही कारण है कि अपने भाई को राजद्रोही ही नहीं बल्कि देशद्रोही घोषित करके स्वयं राजा बना ।"

इस प्रकार राजा का मौन भंग हो गया । तक्षण ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा । (कल्पित)

—(बसुंधरा की रचना के आधार पर)

चन्दामामा परिशिष्ट-५७

भारत के पशु-पक्षी :

बाज़

अंतर्राष्ट्रीय क्रीड़ाओं के उत्सवों के प्रारंभ में विश्व-शांति की कामना करते हुए कबूतर उड़ाये जाते हैं। यह रीति बहुत समय से प्रचलित है। पुराने ज़माने में सुदूर प्रांतों को कबूतरों के द्वारा लिपिबद्ध समाचार भेजे जाते थे। तोतों को बातें सिखाने की भी आदत प्रचलित है। उसी तरह अन्य पक्षियों का शिकार करने के लिए बाज़ों को शिक्षा दी जाती है। आकाश में बाज़ बहुत ही ऊँचा उड़ता है और जैसे ही वह कोई आहार-योग्य पक्षी देखता है तो फटाक् से पकड़ लेता है। कहा जाता है, मज़बूत शरीर, और नुकीले पंखवाले ये बाज़ घंटे में २८० कि.मी. के वेग से उड़ते चले जाते हैं।

उत्तर भारत में 'षहीन' कहलाये जानेवाले इन बाज़ों का उपयोग राजपरिवार करते थे और इनसे पक्षियों के शिकार के खेल खेला करते थे। उड़ते हुए पक्षियों को यह झट से पकड लेता है और पेड़ पर जा बैठता है। फिर उन पक्षियों के पंखों को निकालकर उसे चाव से खाने लगता है।

बताते हैं संसार-भर में क़रीबन ६० जातियों के बाज़ हैं। इसकी नाक के ऊपर का जबड़ा दृढ़ और पैनीदार होता है। 'षहीन' जाति के बाज़ों के दोनों ओर लक़ीरों का काला सर, चौड़े पंख होते हैं। निचला भाग हल्के गुलाबी या लाल रंग का होता है। कुछ बाज़ों के पेट के निचले भाग पर काली रेखायें होती हैं।

जहाँ लोगों का आना-जाना नहीं होता, वहाँ के पर्वतों के शिखरों पर ये अपने घोंसले बनाते हैं। हर साल एक जगह पर अपने घोंसले बनाकर ये अंडे देते हैं। पुरुष बाज़ से भी बडी दीखनेवाली स्त्री बाज़ तीन चार हल्के लाल रंगवाले अंडे देती है।

आज का भारत : साहित्य-दर्पण में

भारत-पाकिस्तान के बंटवारे के पूर्व के वे दिन थे । पंजाब प्रांत के एक ग्राम में रहती हुई ग्रामीण युवती थी पुरो । पड़ोस के ही गाँव के रामचंद नाम के युवक से उसकी शादी पक्की हुई । जब वह अपने वैवाहिक जीवन के सपने देखने में तल्लीन रहा करती थी तब एक दिन रशीद नामक एक जवान मुस्लिम ने अकस्मात् ही उसका अपहरण किया ।

पुरो के दादा सूद का व्यापार करते थे । उन्होंने रशीद के दादाओं के परिवार को बहुत ही सताया और उनको बरबाद कर दिया । इसका बदला लेने के लिए ही रशीद ने पुरो का अपहरण किया ।

रशीद के घर में ही कैद पुरो कुछ समय के बाद एक दिन रात को भाग गयी और अपने घर पहुँची ।

अमृता प्रीतम की 'पिंजारी'

किन्तु अपने मायके में ही उसका बडा अनादर हुआ । क्योंकि वह हिन्दु स्त्री है और उसका अपहरण हुआ है, एक मुस्लिम के हाथों में । अगर उसे घर में ही रहने दिया जाए तो समाज उसके परिवार का बहिष्कार करेगा, उनकी मान-मर्यादा को धक्का लगेगा, इसलिए उसे घर में रहने देने से बडों ने साफ़-साफ़ इनकार कर दिया । पुरो के सामने अब कोई दूसरा रास्ता नहीं रहा तो वह घर छोडकर चली गयी । रशीद ने उसे अपने ही यहाँ आश्रय दिया । दोनों ने शादी कर ली और दूसरे गाँव में चले गये ।

पुरो की बहन की शादी रामचंद से हुई । रामचंद की बहन लाजो ने पुरो के भाई से शादी की ।

पुरो के संबंध अब मायके से किसी भी प्रकार के नहीं रहे । उनके सारे रिश्ते टूट गये । पुरो का नाम अब हमीदा है । शौहर रशीद उसे बहुत चाहता था और बड़े ही प्रेम से उसकी देखभाल करता था । उनका एक लड़का हुआ । यों बहुत साल गुज़र गये ।

भारत और पाकिस्तान का बँटवारा हुआ । देश-भर में दंगे-फ़साद होने लगे । विविध प्रांतों में हिन्दू और मुस्लिम एक दसूरे का कत्ल करने तुल गये । पुरो जिस प्रदेश में रहती है, वह पाकिस्तान का अंग बन गया । वहाँ के हिन्दुओं को ड़रा-धमकाकर वहाँ से भगाने लगे । उनमें से कुछ ड़रकर एक बडे घर में छिप गये । गुंडों ने उस घर में आग लगा दी । समय पर पुलिस आयी और उनकी रक्षा की, लेकिन उनके आते-आते तीन लोग आग में जल गये । जो बचे थे, उनको भारत भेज दिया । जो तीन लोग मरे थे, उनके अस्थिपंजर वहीं रह गये ।

जो हिन्दू अपना गाँव छोड़ रहे थे, पुलिस की निगरानी में पुरो के ही गाँव में उन्होने रात गुज़ारी । पुरो ने रामचंद को उस दिन वहाँ देखा, जिससे उसकी शादी होनेवाली थी । उसके द्वारा उसे मालूम हुआ कि उसके भाई की पत्नी लाजो का कोई पता नहीं है ।

सबेरे-सबेरे हिन्दू भारत निकले । पुरो लाजो को ढूँढ़ने में लग गयी । एक विधवा के घर में लाजो दिखायी पड़ी । उस बूढ़ी विधवा का बेटा उस सुँदर लड़की से शादी करने की योजना बना रहा था ।

पुरो ने अपने पति रशीद की मदद से आधी रात को लाजो को बचाया और वहाँ से लेकर चल पड़ी । उसे अपने भाई को सौंपा।

पुरो के भाई ने उसे सलाह ही कि भारत चले जाने का यह अच्छा मौका है, और यह मौका हाथ से जाने मत दो, पर पुरो अपने पति को छोड़कर जाने के लिए तैयार नहीं थी । हाँ, यह बात तो सच है कि अपना बदला लेने के लिए उसने उसका अपहरण ज़रूर किया है, परंतु अब वह उसे बहुत चाहता है, और उसकी बहुत ख़बर रखता है ।

लूट-मार और गुँडागर्दी के शिकार होकर निर्जीव अस्थिपंजर हो जाने वाली स्त्रीयों की विषाद-पूर्ण स्थितियों का दर्पण है 'पिंजारी' (अस्थिपंजर) । यही कथावस्तु इस उपन्यास का विषय है । प्रमुख पंजाबी रचयित्री अमृता प्रीतम ने इसकी रचना की है ।

समाज की गति-विधियाँ वास्तविक रूप में इस उपन्यास में दर्शायी गयी हैं, इसलिए रचयित्री ने इसका नाम 'पिंजारी' रखा है, जो बहुत ही भावगर्भित है । अमृता प्रीतम साहित्य अकाडमी तथा ज्ञान पीठ पुरस्कार प्राप्त रचयित्री हैं ।

क्या तुम जानते हो?

१. ईसाई अपना दुख प्रकट करने के लिए काले कपड़े पहनते हैं । चीन देश-वासी किस रंग के कपड़े पहनते हैं?
२. बंबई में स्थित 'गेट वे आफ़ इंडिया' किस राजा के सम्मानार्थ निर्मित हुआ ।
३. विक्टोरिया रानी ने अधिक समय तक इंग्लैंड़ पर शासन चलाया? कितने सालों तक वे शासन करती रहीं?
४. 'कबूकी' नामक नृत्य नाटक-प्रक्रिया किस देश की है?
५. अमेरीका के संयुक्त राष्ट्रों में एक राष्ट्र ने पहले-पहल अपनी आज़ादी की घोषणा की थी । लेकिन उस राष्ट्र ने अमेरीका के संविधान को अंत में ही स्वीकृति दी है । वह कौन-सा राष्ट्र है?
६. १७८८ में अंग्रेज़ों ने आस्ट्रेलिया के एक नगर को 'कैदियों की कालनी' घोषित किया । वह नगर कौन-सा है?
७. करीबन दो हज़ार सालों से स्वतंत्र अफ़्रीका का देश कौन-सा है?
८. २,४०० साल पूर्व मृत्यु-दंड प्राप्त ग्रीक दार्शनिक कौन था?
९. हमारे देश में सर्वप्रथम प्रकाशित साप्ताहिक पत्रिका 'बंगाल गजेट' का प्रकाशक कौन है?
१०. चीन पर शासन करनेवाला प्रथम शासक कौन है?
११. भूमि पर अति शीतल प्रदेश का नाम क्या है?
१२. सर इज़ाक पिटमन किसके लिए प्रसिद्ध हुआ?
१३. 'ताजमहल' के रूप की कल्पना करनेवाले पर्शिया का वास्तुविद् कौन है?
१४. स्त्रीयों को सर्वप्रथम मतों का हक देनेवाला देश कौन है?
१५. बहुत ही ऊँचाई पर स्थित राजधानी नगर का नाम क्या है?
१६. अंतरिक्ष में यात्रा करनेवाली प्रथम महिला कौन है?
१७. मीटर गेज और ब्राड गेज का अंतर क्या है?
१८. हमारे देश में प्रसिद्ध सूर्यमंदिर का क्या नाम है?
१९. कर्नाटक संगीत में किनको त्रिमूर्ति मानते हैं?
२०. ब्रह्मपुत्र नदीं कहाँ और किस समुंदर में जा मिलता है?

उत्तर

१. सफ़ेद ।
२. इंग्लैड़ का राजा पाँचवाँ जार्ज ।
३. ६३ साल ।
४. जापान ।
५. रोड़ ऐलाँड ।
६. सिडनी ।
७. इथियोपिया ।
८. सोक्रटीस ।
९. जेम्स अगस्टन हिकी ।
१०. चंगेज़खान का पोता कुब्लाखान ।
११. अंटारटिका नोस्टाक स्टेशन-८७ सेल्सियस
१२. षार्टहान्ड लिपि का रूप दिया ।
१३. उस्ताद ईसा ।
१४. न्यूज़लांड १८९३ में ।
१५. बोलिविया की राजधानी-लापोज ।
१६. बोरिना तेरिष्कोवा ।
१७. मीटर गेजः मीटर, ब्राडगेज १,६७५ मीटर ।
१८. ओरिस्सा का कोणार्क ।
१९. त्यागराजु, श्यामशास्त्री, मुत्तुस्वामी दीक्षित ।
२०. नौखाली के पास बंगलाखाडी में ।

श्रेष्ठ वैद्य

राजा विक्रमसेन शिकार करने जंगल गया और रास्ता भटक गया । रास्ता ढूँढ़ते-ढूँढ़ते शरीर भर काँटे चुभ गये और वह बहुत ही घायल हो गया । इस असहाय स्थिति में एक साँप ने उसे डस लिया । बस, इससे वह बेहोश हो गया ।

जब वह होश में आया तो उसने देखा कि वह एक आश्रम में फूलों की सेज पर लेटा हुआ है । मुनि जो राजा के बग़ल में ही बैठा हुआ था, बोला "अच्छा हुआ, ऐन वक़्त पर मेरे शिष्यों ने तुम को बेहोश पड़े देखा और तुम्हें यहाँ ले आये । जो चिकित्सा मुझसे हो सकी, मैंने की । पुत्र, अब कैसी स्थिति है?"

विक्रमसेन ने बडे ध्यान से अपने शरीर को देखा । उसे कहीं भी घाव दिखायी नहीं पडा । उसे लगा कि उसपर साँप के डसने का भी कोई प्रभाव नहीं है ।

उसने मुनि को विनयपूर्वक नमस्कार किया और कहा "मुनिवर, आप कोई सामान्य व्यक्ति नहीं हैं । आप जैसे महानुभाव का जंगल में रहना उचित नहीं है । मेरी कामना है कि आप राजधानी अवश्य आवें और मेरी बीमार प्रजा की चिकित्सा करें और उनकी रक्षा करें ।"

मुनि राजा की इन बातों पर हँस पडा और बोला "राजन्, चिकित्सा का मेरा ज्ञान नहीं के बराबर है । जब मैं सांसारिक था, तब मैंने प्रचंड नामक एक श्रेष्ठ वैद्य की सेवा-शुश्रूषा की और थोडी-बहुत चिकित्सा की शिक्षा प्राप्त की । इस संबंध में मेरा ज्ञान तो अधूरा ही कहा जा सकता है ! प्रचंड को चिकित्सा का जो ज्ञान है, उससे तुलना की जाए तो उसमें मेरा ज्ञान सौ में एक प्रतिशत भी नहीं होगा । जब कि प्रचंड आपके ही राज्य में रहता हैं तो मेरी

रामावतार

ज्ञानोदय हुआ । वह जैसे ही अपना राज्य लौटा, मंत्री को बुलाया और पूछा "क्या आप जानते है कि हमारे राज्य में क्या कोई ऐसा वैद्य है, जो राज-सम्मान पाने योग्य है?"

"वैद्यों के बारे में मैं क्या जानूँ प्रभू? राजवैद्य प्रदीप से पूछकर जानकारी प्राप्त करनी होगी ।" यों कहकर मंत्री ने प्रदीप को बुला लाने एक नौकर को भेजा ।

प्रदीप ने आकर राजा के संदेह का विवरण प्राप्त किया तो कहा "प्रभु, मैं राजवैद्य हूँ और मुझसे बढ़कर कोई वैद्य इस राज्य-भर में नहीं है । स्वागत तो बहुत ही बडे स्तर में मेरा ही होना चाहिये, लेकिन संकोच और लज्जा यह पूछने से मुझे रोक रहे हैं ।"

आवश्यकता का सवाल ही नहीं उठता ।"

विक्रमसेन मुनि की इस बात पर आश्चर्य प्रकट करता हुआ बोला "मुझे तो इसकी जानकारी ही नहीं है कि प्रचंड का निवास मेरे राज्य में है ।"

उत्तर में मुनि बोला "तुम भी कैसे राजा हो, जिसे इस बात की जानकारी ही नहीं कि प्रचंड जैसा श्रेष्ठ वैद्य तुम्हारा ही नागरिक है । जब तक तुम उसका राजसम्मान नहीं करते तब तक इसका अर्थ यह हुआ कि तुम अच्छे शासक नहीं हो । वह तुम्हारे ही राज्य के सौभाग्यनगर में निवास करता है । जाओ और उसका सत्कार करके अपना राजधर्म निभाओ ।"

राजा ने अपना कर्तव्य जाना । उसमें

"तो क्या तुम जानते ही नहीं हो कि सौभाग्यनगर में प्रचंड नामक एक बहुत बड़ा वैद्य है ।" राजा विक्रमसेन ने पूछा ।

प्रचंड का नाम सुनते ही प्रदीप का चेहरा फ़ीका पड़ गया । उसके मुख की कांति जाती रही और उसका उत्साह ठंडा पड़ गया । अनिच्छा से उसने कहा "प्रभु, मैंने प्रचंड का नाम सुना तो अवश्य है । सुना है, उससे जो चिकित्सा करवाते हैं, वे धनवान से दरिद्र बन जाते हैं । कुछ दिनों पहले सौभाग्यनगर का कुमारगुप्त नामक एक धनवान यहाँ । आया हुआ था । वह मेरा दोस्त है । उसने मुझे यह बात सुनायी । लालच कुछ हद तक ठीक है, लेकिन जब वह सीमाएँ पार कर जाती है, तब अमानुषिक होती

है ।" प्रदीप ने कहा ।

राजा ने प्रदीप को भेज दिया और बहुत ही असंतुष्ट स्वर में मंत्री से बोला "मैंने प्रचंड की श्रेष्ठता के बारे में बहुत-कुछ सुना है । जिसने यह बात मुझसे बतायी, वह भी कोई साधारण व्यक्ति नहीं है । वह एक महामुनि है ।"

मंत्री ने कहा 'आपके संदेह की निवृत्ति कुमारगुप्त से मिलने पर ही हो सकती है । परंतु, आप महाराज बनकर उसके पास जायेंगे तो वह निर्भय होकर सच बता नहीं पायेगा । हम बहुरूपिये बनकर उस नगर में जायेंगे और सच्चाई जानने का प्रयास करेंगे । महामुनि तो झूठ बोल ही नहीं सकता । मुझे तो लगता है कि हमारे राजवैद्य प्रदीप ने ही झूठ-मूठ की कहानी गढ़ी है ।"

राजा और मंत्री बहुरूपिये बनकर सौभाग्यनगर पहुँचे । उन्हें लगा कि प्रचंड वहाँ कोई प्रख्यात व्यक्ति नहीं है । वे कुमारगुप्त से मिले तो उसने वही कहा, जो प्रदीप कह चुका था ।

मंत्री ने तब कुमारगुप्त से कहा "मुझे तो लगता है कि उनसे आपकी कोई वैय्यक्तिक शतृता है, जो आपको ऐसा कहने पर बाध्य कर रही है ।"

उस पर कुमारगुप्त हँसा "हाँ, यह बात तो सच है कि प्रचंड से मेरी नहीं बनती । लेकिन मैंने उसके बारे में जो भी कहा, वह केवल मेरा ही विचार नहीं है । प्रचंड का एक जिगरी दोस्त है परांकुश । यह उसी का विचार है । आप चाहें तो उससे मिलिये और सच्चाई जानिये ।"

राजा और मंत्री परांकुश से मिले और जब उन्हें मालूम हुआ कि कुमारगुप्त की बातें सच्ची हैं तो राजा ने मंत्री से कहा "प्रचंड उच्चकोटि का वैद्य हो सकता है, लेकिन लगता है कि राज-सम्मान की योग्यता का वह हक़दार नहीं है क्योंकि उसमें अच्छाई का अभाव है, जो राजसम्मान पाने के लिए आवश्यक है। सचमुच यह बडे दुर्भाग्य की बात है।" राजा को बडी व्यथा भी हुई। राजा की इन बातों से परांकुश को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने राजा से कहा "मैं तो चाहता था कि लोग उसके वैद्य की श्रेष्ठता के बारे में ही नहीं बल्कि उसकी अच्छाई के बारे में भी जानें। हाँ, मेरा बताने का ढंग अवश्य ही कुछ निराला है। इसलिए आपको ग़लतफहमी हुई है। प्रचंड में तो लालच नाम-मात्र के लिए भी नहीं है। मानव की सेवा भगवान की सेवा है, यही उसका आदर्श है। यही कारण है वह ग़रीब और भिखमंगों की ही सेवा करता है, उनकी चिकित्सा करता है। इसी वजह से जितना नाम उसे कमाना था, कमा नहीं पाया। कोई धनवान उससे चिकित्सा करवाना चाहे तो उसे भिखमंगे का वेष धारण करना ही पड़ेगा। अब तो आप समझ गये ना मेरी बात की विलक्षणता।"

अब राजा विक्रमसेन का संदेह दूर हो गया। अब वह समझ गया कि किसी भी बात की पूरी जानकारी प्राप्त किये बिना विश्वास कर बैठना नहीं चाहिये। विशेषतया कवियों की बातों का, क्योंकि वे बातें द्विअर्थों में करते हैं। जब तक कोई पूरी गहराई में नहीं उतरता तब तक उनकी बातों का गूढ़ार्थ मालूम नहीं हो पाता। इस घटना के बाद विक्रमसेन ने प्रचंड का सम्मान बहुत ही बड़े पैमाने पर किया। इसी से वह संतृप्त नहीं हुआ। उसने जानकारी प्राप्त करना प्रारंभ कर दिया कि उसके राज्य में और कौन-कौन महान हस्तियाँ हैं। राजवैद्य प्रदीप में भी अब बड़ा परिवर्तन हुआ। वह जब कभी भी मौक़ा मिलता, ग़रीबों की चिकित्सा मुफ्त में करने लगा। अब उसे मालूम हो गया कि जन-सामान्य तक पहुँचने का और उनका सहयोग पाने का यही एक मार्ग है।

सुस्त की लड़ाई

कोशल राज्य में वीरदास नाम का एक जवान था। वह अव्वल दर्जे का सुस्त था । सोना और खाना, ये ही उसके दो काम थे । किसी और तीसरे काम से उसका सरोकार ही नहीं था । उसके माँ-बाप उसके बचपन में गुज़र चुके थे तो दादी ने बडे लाड-प्यार से उसे पाला-पोसा । इससे वह और सुस्त बनता गया ।

कोशल राज्य में वह पैदा हुआ और बडा हुआ । वैदेही राज्य, कोशल ही के पडोस का राज्य था । इन दोनों राज्यों में बहुत ही अर्से से दुश्मनी थी । कोशल पर विजय पाने के उद्देश्य से वैदेही राज्य के राज्य सिंहसेन ने बहुत बडी मात्रा में सेना इकट्ठी की और एक दिन अकस्मात् उसपर युद्ध की घोषणा कर दी ।

गुप्तचरों से कोशल राज्य के राजा चंद्रकांत को मालूम हुआ कि कोशल राज्य की सेना उसकी सेना से तीन गुना अधिक है तो उसने राज्य में मुनादी पिटवा दी कि देश के समस्त युवक सेना में शीघ्र ही भर्ती हो जाएँ ।

मुनादी का विषय जानने पर कितने ही युवक अपने देश की रक्षा के लिए सेना में भर्ती हो गये । उनको युद्ध की शिक्षा भी दी जाने लगी । सैनिकों से बचकर घूमते हुए वीरदास को गुप्तचरों ने देखा । उन्होंने उससे कहा "क्यों अब तक सेना में भर्ती नहीं हुए? सेना में भर्ती हो जाओ और अपनी देशभक्ति को साबित करो ।"

आश्चर्य प्रकट करता हुआ वीरदास बोला "युद्ध और देशभक्ति की बातें पहली-पहली बार मैं सुन रहा हूँ । दादी का खिलाया खाना खाने, और अच्छी नींद सोने के अलावा मुझे कुछ भी मालूम नहीं" ।

उसकी बातों से गुप्तचर समझ गये कि यह अव्वल दर्जे का सुस्त है । उन्होंने उसकी

भार्गवी

बाहें बाँध दीं और उसे युद्ध की शिक्षा प्राप्त करते हुए युवकों के बीच में ड़ाल दिया ।

अब सिंहसेन अपनी सेना सहित कोशल राज्य की सरहदों में पहुँच गया । राजा चंद्रकांत भी अपनी सेना सहित दुश्मन का सामना करने के लिए निकल पड़ा । सब सैनिक तलवार, ढ़ाल, कवच आदि लिये राजा के साथ निकल पड़े । वीरदास में इतनी शक्ति नहीं थी कि वह ये सब ढोये, इसलिए सिर्फ तलवार हाथ में लिये चल पडा । लड़ाई के मैदान में अग़र भूख लगे तो खाने केलिए चार रोटियाँ काँसे के बरतन में रखीं और उसे पेट के पास के कपड़ों में छिपा लिया । मिट्टी के एक बरतन में पानी भर दिया और उसे कंधे से लटका लिया ।

तब एक बूढ़ा सैनिक उसे दिखायी पड़ा, जो घायल होकर कराह रहा था । उस सैनिक ने वीरदास को देखकर इशारे से बताया कि वह प्यासा है और उसे पीने केलिए पानी चाहिये । वीरदास ने उसे पानी पिलाया ।

पानी पीने के बाद उस घायल बूढ़े सैनिक ने अपने दुपट्टे के अंदर छिपायी चमकती तलवार को बाहर निकाला और कहा "इस तलवार को दुश्मन राजा की छाती में भोंकना चाहता था । परंतु मेरा यह भाग्य नहीं रहा । मृत्यु की इन आख़िरी घड़ियों में तुम्हें देखकर मुझे लग रहा है मानों मैं अपने किसी घने मित्र से मिल रहा हूँ । मेरी पोती बड़ी ही सुँदर और अक्लमंद लड़की है । वह हठ करती रहती है कि मैं जिसे चाहूँगा, उसी से शादी करूँगी । लो, यह अंगूठी । उससे बोलना कि मैंने ही उसके पास तुम्हें भेजा है । अगर किसी तरह इस युद्ध-भूमि से बचकर निकलो तो अवश्य ही तुम्हीं उसके पति बनोगे ।" कहते हुए अंगूठी वीरदास को दी और तलवार की मूँठ को खूब कसकर पकडे हुए परलोक सिधार गया ।

बूढ़े सैनिक की मौत को देखते हुए वीरदास को लगा कि वह किसी भी हालत में मौत के मुँह से बच नहीं सकता । इतने में मौत से बचने के लिए उसे एक उपाय सूझा । फ़ौरन मरे हुए बूढ़े सैनिक के बग़ल में लेट गया । उसके कपडों पर जो लहू था, उसे अपने कपडों पर पोत लिया और ऐसा लेट गया, मानों मर चुका हो । लेटने के कुछ

क्षणों में वह गहरी नींद में चला गया ।

पर हठात् एक विपदा उस पर आ टूटी जिसकी कल्पना भी उसने नहीं की थी । युद्धभूमि में घुड़सवार अपने प्राणों की भी बाजी लगाकर युद्ध कर रहे थे । इससे कुछ घोड़े घायल हो गये और वे तितर-बितर होकर दौड़ने लगे । एक घोड़े का पैर बडे ज़ोर से वीरदास के कंधों को लगा, जिससे हाय-हाय करता हुआ वह उठ खड़ा हो गया ।

उस समय घोड़े पर तेज़ी से गुज़रते हुए, शत्रु राजा सिहसेन ने वीरदास को देखा, जिसके पास ना ही कवच था या ना ही हथियार । उसने सोचा, बिना हथियारों के खड़ा यह युवक अवश्य ही कोई बड़ा पराक्रमी होगा । उसने कहा "वाह, तुम जैसे पराक्रमी की मौत मेरे हाथ लिखी हुई है ।" कहता हुआ उसकी पेट में तलवार भोंक दी ।

वह तलवार सीधे काँसे के बरतन को लगी, जिसने उसे कपडों के पीछे छिपाया था । इससे बडी आवाज़ निकली । इस आवाज़ से राजा का घोड़ा घबरा गया और उस घबराहट में वह पीछे के पैरों पर खड़ा हो गया । राजा अपना संतुलन खो बैठा, और धड़ाम् से नीचे गिर गया ।

जो हुआ, उस पर राजा को बहुत अचरज हुआ । अपने को संभालते हुए उसने दूरी पर गिरी अपनी तलगार लेनी ही चाही कि इतने में वीरदास ने अपना पूरा साहस बटोरा और एक पल की भी देरी किये बिना उस बूढ़े की लाश को उठाकर राजा पर फेंक दिया।

सैनिक की लाश जब राजा पर फेंकी गयी, तब उस सैनिक की मुट्ठी में बंद तलवार राजा की छाती में घुस गयी । राजा 'वैदेही राज्य की जय' कहकर चिल्लाता हुआ ज़मीन पर गिर गया और यों उसके प्राण-पखेरू उड़ गये । अपने राजा की इस आकस्मिक मृत्यु से उसकी सेना भयभीत हो गयी । वे इधर-उधर भागने लग गये । अब वे किसी प्रकार अपनी जान बचाने की कोशिश में लग गये । चंद्रकांत को जब मालूम हुआ कि वीरसेना के हाथों शत्रु राजा सिंहसेन मारा गया है तो उसे स्वयं देखने उसके पास आया और कहा "ओहो, तुम तो महावीर हो । तुम्हारी शूरता अद्भुत है । तुमसे लड़ने की जुर्रत कोई नहीं कर सकता" राजा ने

यों उसकी प्रशंसा के पुल बांधे और उसे राजमर्यादाओं के साथ अपने किले में ले गया । उससे पूछा ''बोलो, तुम्हें क्या चाहिये?''

''महाराज, चाहे कितना ही बडा शूर-वीर क्यों ना हो, जब युद्धभूमि में वह शत्रुओं का नाश करता है, हज़ारों की संख्या में शत्रु-सैनिकों को मौत के घाट उतारता है तो अवश्य ही वह थक जाता है । मैं भी अब बहुत थका हुआ हूँ । मुझे पेट-भर खिलाइये और खूब सोने के लिए कोई अच्छी-सी जगह का प्रबंध कीजिये'' वीरदास ने राजा से बड़ी ही निश्चिंतता से कहा ।

राजा चंद्रकांत ने एक बढ़िया महल उसे सौंपा और सैनिकों को भी वहाँ उसकी देखभाल के लिए तैनात किया । यह महल उसे भेंट-स्वरूप दिया ।

एक सप्ताह भर वीरदास उस महल में आराम करता रहा । बाद अपने गाँव गया और दादी को पालकी में बिठाकर अपने महल में ले आया । जन्म से ही सुस्त अपने पोते के वैभव को देखकर दादी की खुशी का ठिकाना ना रहा । थोड़े दिनों के बाद वीरदास ने अपनी दादी को, उस बूढ़े सैनिक की पोती का वृत्तांत सुनाया । वह उस लड़की के गाँव गयी और अंगूठी दिखाकर अपने साथ महल में ले आयी । राजा की उपस्थिति में वीरदास और उस सैनिक की पोती का विवाह बड़े धूमधूम से संपन्न हुआ ।

एक पल के लिए ही सही, मृत्यु के भय से ही सही, वीरदास ने जो पराक्रम दिखाया, उससे यह सारा वैभव प्राप्त हुआ है । वीरदास ने बड़ी ही सूक्ष्मता से इसका विश्लेषण किया और निर्णय कर लिया कि सुस्ती बडी ही बुरी बात है, इससे मनुष्य-जन्म व्यर्थ हो जाता है । अब उसने युद्ध की विद्याओं को परिश्रम करके सीखा । आख़िर राजा के सेनाधिपतित के पद पर आसीन हुआ ।

वीर हनुमान

चैत्रशुद्ध पंचमी के दिन, राम अयोध्या छोड़कर वनवास के लिए प्रस्थान हुआ। चैत्रशुद्ध चवति को चौदह साल समाप्त हुए। उसके दूसरे दिन वह भरद्वाजाश्रम पहुँचा। उसने भरद्वाज को प्रणाम करके कहा "स्वामी, अयोध्यानगर सुरक्षित और सुव्यवस्थित है ना? भरत का राज्य-पालन सुचारू रूप से चल रहा है ना? हमारी माताएँ सभी सुखी हैं ना?"

भरद्वाज ने कहा "भरत ने अपने शरीर को बाल और जटाओं से ढ़क लिया है। तुम्हारी पादुकाएँ सम्मुख रखकर राज्य-शासन कर रहा है। वह तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। वहाँ सब सकुशल हैं"।

भरद्वाज ने इच्छा प्रकट की कि राम उस दिन वहीं उसका अतिथि बनकर रहे और दूसरे दिन अयोध्या जाए।

राम ने पहले हनुमान को भेजना चाहा। इसलिए उसने हनुमान से कहा "तुम श्रृंगवेरपुर जाओ। वहाँ के भील राजा गुह से कहो कि मैं शत्रुओं को पराजित करके सुकुशल लौट रहा हूँ। मेरे निकट मित्र गुह यह सुनकर बहुत ही आनंदित होगा। वह तुम्हें अयोध्या का मार्ग-दर्शन भी करेगा और भरत के समाचार भी सुनायेगा। उपरांत तुम भरत से जाकर मिलो और उसे बताओ कि मैं सकुशल हूँ और वनवास समाप्त करके सीता, लक्ष्मण सहित अयोध्या आ रहा हूँ। तुम भरत से सीतापहरण से लेकर रावण-संहार तक की पूरी गाथा सविस्तार

कि वही शासन-भार संभाले । याद रखो, जितनी जल्दी हो सके, अपनी यात्रा समाप्त करके लौटो ।''

राम ने जैसे ही हनुमान को प्रस्थान करने की आज्ञा दी, तक्षण मनुष्य-रूप में वह आकाश में उड़ा और अयोध्या की ओर निकल पड़ा । पहले वह श्रृंगबेरपुर पहुँचा और गुह से मिलकर निवेदन किया ''राम ने अपनी सकुशलता तुमसे बताने को कहा है । वह सीता-लक्ष्मण सहित आज रात को वहीं ठहरकर भरद्वाजाश्रम से कल प्रातःकाल निकलेगा । बहुत ही शीघ्र तुम उसे देख सकते हों ।'' यह कहकर फिर से आकाश-मार्ग से शीघ्र गति से नंदिग्राम पहुँचा ।

सनावो । बताते समय ध्यान से देखो कि उसके मुख-मंडल पर किस प्रकार के भाव वर्तमान हैं । कहो कि मैंने शत्रुओं को पराजित किया है, असीम कीर्ति पायी है, बलवान मित्रों को साथ लेकर आया हूँ । तुम्हें यह जानकर लौटना होगा कि जब यह सब तुम उससे कहोगे तो उसके हृदय पर क्या बीत रहा है, उसके मुख पर कैसे भाव व्यक्त हो रहे हैं? पिता और दादाओं के राज्य पर वह शासन कर रहा है । उसे इस राज्य को छोडना कष्टतर लगता होगा, पीड़ा होती होगी । चूँकि लंबी अवधि तक वह राज्य पर शासन करता रहा है, शायद वही राजा बनकर रहना चाहता हो, तो उसे राजा ही बनकर रहने दूँगा । इस स्थिति में अच्छा तो यही होगा

नंदिग्राम के चारों तरफ बहुत ही सुँदर वृक्ष थे । वे नंदन उदयान के वृक्षों से भी सुँदर लग रहे थे । वहाँ से अयोध्या की यात्रा दो घड़ियों की है । वहाँ भरत, आश्रम की स्थापना करके हिरण की खाल पहने इस बात पर बहुत ही चिंतित था कि चौदह साल समाप्त होने के बाद भी अग्रज राम अब तक क्यों नहीं लौटे? स्नान ना करने के कारण धूल से वह लथपथ था । बाल जटाएँ बनकर रह गये । वह केवल कंद मूल फल ही खा रहा था । उसी स्थिति में मंत्रियों, पुरोहितों व सेनाध्यक्षों के साथ रहकर वहीं से राज्य का पालन कर रहा था । उसके साथ रहनेवाले सब सभासद् गेरुवें रंग के वस्त्र पहने हुए थे ।

भरत को देखकर हनुमान ने प्रणाम किया । भरत को इस स्थिति में देखकर हनुमान की आँखों में आँसू भर आये । वह भाँप गया कि भरत को अपने राम से कितना प्रेम है । वह जान गया कि त्याग, निस्वार्थता, निष्ठा, आत्म-समर्पण आदि श्रेष्ठ गुणों का दूसरा नाम है भरत । राम की पादुकाएँ रखकर राजधानी से दूर राम ही के नाम पर वह राज्य चला रहा है । भक्ति और श्रद्धा का इससे उत्तम उदाहरण और क्या हो सकता है? भरत स्वयं राजा है, परंतु उसे अपनी वेषभूषा तथा सुविधाओं की कोई परवाह नहीं । उसके मुखमंडल पर एक ही भाव झलक रहा है और वह है राम का दर्शन-भाग्य । ऐसे भरत को देखकर हनुमान ने राम की कही बातें भी भुला दीं और थोड़ी देर के लिए उसे ही देखता रहा । फिर अपने को संभालकर उसने कहा "राम ने कहा है, वह सकुशल है । मैं ऐसा समाचार तुमको सुनाऊँगा, जिससे तुम्हारी चिंता दूर हो जायेगी । तुम शीघ्र ही राम को देख पाओगे । राम रावण का वध करके, सीता को पुनः पाकर, अपनी संपूर्ण इच्छाएँ पूर्ण करके बलशाली मित्रों के साथ आ रहा है । उसके साथ सीता और लक्ष्मण भी आ रहे हैं ।"

इस समाचार को सुनते ही भरत के आनंद की सीमा ना रही । वह होश खो बैठा । फिर जब होश में आया तब उसने हनुमान से कहा "महाशय, तुमने मुझे अति मधुर और प्रिय समाचार सुनाया है । मैं नहीं जानता कि तुम मनुष्य हो अथवा देवता । पुरस्कार में तुम्हें लाख गायें, सौ ग्राम, समस्त आभूषण व चौदह कन्यायें दे रहा हूँ ।"

पादुकाएँ लेकर भरत के चित्रकूट से अयोध्या लौटने के बाद जो-जो हुआ, वह सब कुछ हनुमान ने भरत के आग्रह पर सविस्तार उसे सुनाया ।

भरत ने पूरा वृत्तांत जानने के बाद आनंद से शत्रुघ्न को आज्ञा दी "अयोध्या के सब पुरुषों से कहो, वे स्नान करें और सुगंधियों, पुष्पों और बाद्यों के साथ मंदिर में स्थित देवी-देवताओं की मूर्तियों का पूजा-पाठ करें । राम को देखने के लिए भाट, चारण संगीत के वाद्यों को लिये बड़ी संख्या में आवें ।"

शत्रुघ्न ने हज़ारों सैनिकों को बुलाया और आज्ञा दी "तुम लोग नंदिग्राम से लेकर अयोध्या की राह को बिना ऊबड-खाबड़ के समतल बनाओ । कुछ सैनिक राह पर ठंडे से ठंडा पानी छिड़कें । उस पर फूल बिछा दो । सूर्योदय के पूर्व ही अयोध्या की गलियों और घरों को अलंकृत करो । पूरे विशाल राजमार्ग पर फूलों के तोरण बाँधो । फूल और चंदन छिड़को, पाँच रंगों के चूर्ण से रंगोली सजावो" ।

रानियाँ, मंत्रिगण, सैनिक, उनकी धर्मपत्नियाँ, ब्राह्मण, क्षत्रिय, गणनायक सब के सब राम को देखने के लिए निकल पड़े । कुछ हाथियों पर गये तो कुछ रथों में । सैनिक रंग-बिरंगे हथियार लिये चल पड़े । दृष्टि, जयंत, विजय, सिद्धार्थ, अर्थसाधक, अशोक, मंत्रपाल, सुमंत नामक मंत्रिगण भी इनमें से थे । दशरथ की धर्मपत्नियाँ वाहनों में नंदिग्राम पहुँचीं ।

राम की पादुकाएँ सिर पर धरे भरत राम को लेने आगे बढ़ा । उसके साथ ब्राह्मण, व्यापारी, नगर के प्रमुख व्यक्ति, हार अपने हाथों में लिये आ रहे थे । भरत के साथ-साथ राज-चिन्ह छत्र, चँवर और सुवर्ण-दंड भी थे ।

बहुत समय तक प्रतीक्षा करने के बाद भी जब राम का सामना नहीं हुआ तो भरत ने हनुमान से कहा "तुम्हारी बुद्धि बंदर की है ना? इसलिए क्या तुमने राम के आगमन का असत्य समाचार सुनाया है? राम कहाँ है? कहीं दिखायी नहीं पड़ता । तुम नहीं जानते कि मुझपर क्या बीत रही है? राम को देखने के लिए मैं कितना तड़प रहा हूँ?

जब कभी भी मुझे स्मरण हो आता है कि मेरे कारण श्रीराम को बनवास करना पड़ा है तो मेरा हृदय व्याकुल हो उठता है । मैंने अवश्य ही पूर्व जन्म में कोई ऐसा पाप किया होगा, जिसके कारण मुझे इस आत्म-संक्षोभ का शिकार होना पड़ा है । मैं और मेरी जनता केवल राम के पुनरागमन और उसके दर्शन के लिए जीवित हैं । हाँ, मुझे पूरा विश्वास है कि राम अपने वचन के अनुसार अवश्य ही चौदह सालों की पूर्ति के दूसरे ही दिन लौटेंगे । अगर दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हुआ तो यह भरत जीवित नहीं रहेगा ।'' भरत के इस आत्म-घोष को सुनते हुए हनुमान हिल गया और बोला।

''भरद्वाज मुनि ने वानरसेना को बहुत ही बड़ा भोज दिया है । उसके उद्यान में विकसित पुष्पों को देखकर समस्त वानरसेना में उत्साह भर गया है । तुम सुन नहीं रहे हो उनका कोलाहल । लगता है, वे अब गोमती नदी को पार कर रहे हैं । देखो, वह पुष्पक विमान । दूर से दीख रहा है । कुबेर का वह बिमान अब राम का हो गया है । उस विमान में राम के साथ सीता देवी लक्ष्मण, वानरों का राजा सुग्रीव, और राक्षस राजा विभीषण भी उपस्थित हैं ।'' हनुमान ने भरत से कहा ।

शीघ्र लोगों की चिल्लाहटें प्रतिध्वनित होने लगीं ''देखो, राम आ रहा है ।'' राम को देखने के लिए जो भी आये, खड़े हो गये । उनकी आतुरता पराकाष्ठा पर थी ।

राम आ ही गया । सामने खड़े राम को प्रणाम करके भरत ने कहा ''वचनबद्ध होकर
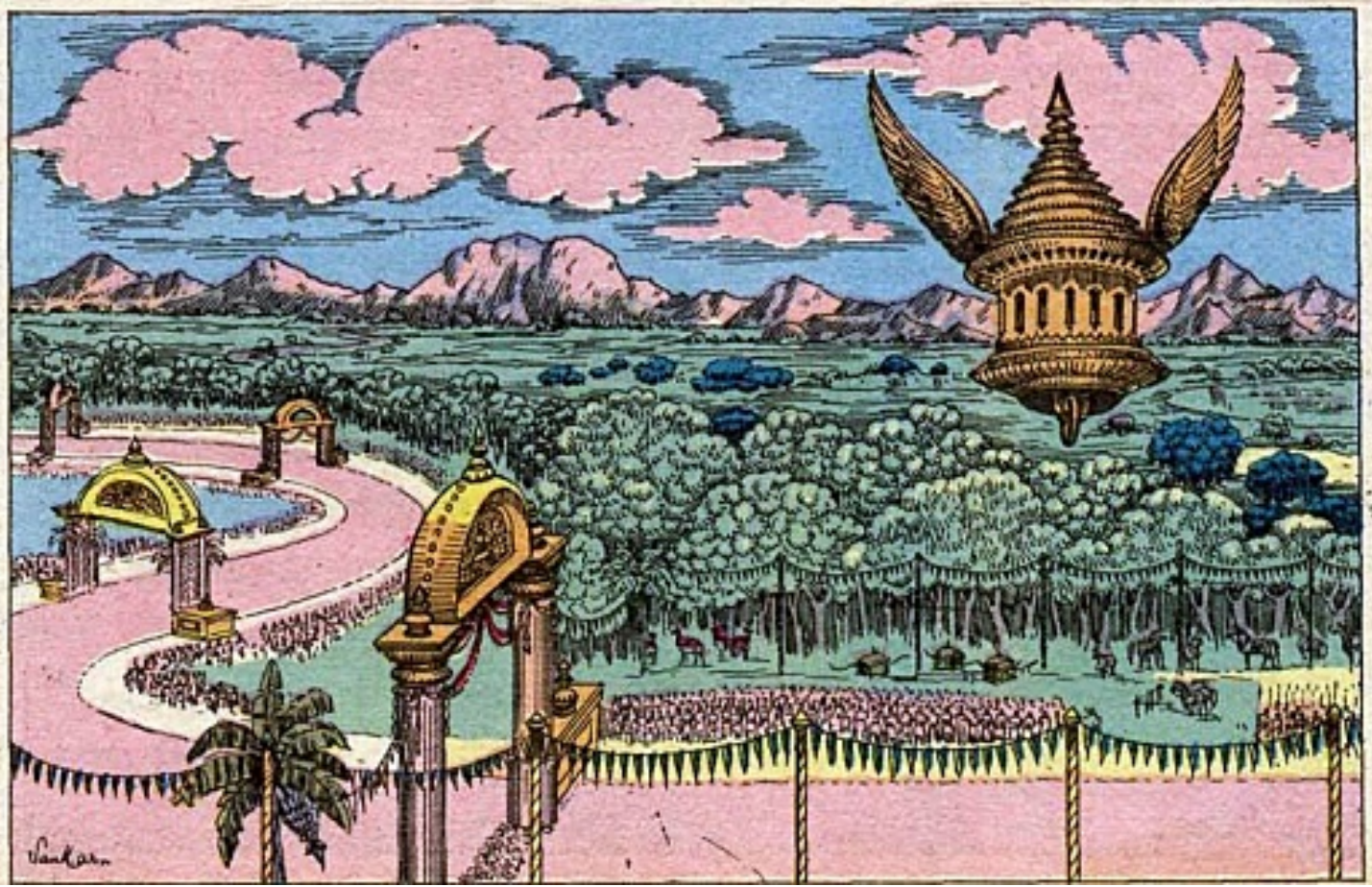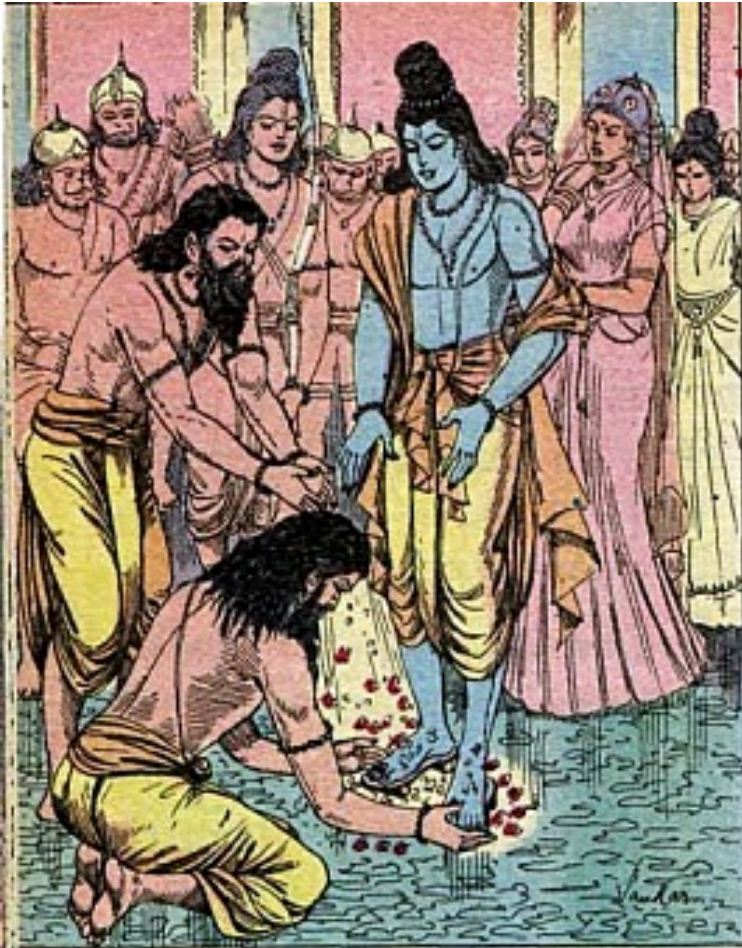
नियमित अवधि के अंदर आकर हमारा कल्याण किया है तुमने । धन्यवाद ।"

राम और भरत का यह मिलाप बहुत ही अद्भुत है । ऐसा दृश्य ना किसी ने कहीं देखा होगा या सुना होगा । पारस्परिक प्रेम का ऐसा अनोखा दृश्य तीनों लोकों में ना किसी ने कभी देखा होगा अथवा कभी देख पायेंगे । भरत राम के पाँवों पर गिर पड़ा और अपने आँसुओं से उसे धोने लगा । वह अपना सर उठाने का नाम ही नहीं ले रहा था, मानों अब भी वह अपनी माता के किये पर लज्जित है । राम के हृदय की भी यही स्थिति है । राम को लग रहा है कि वे स्वयं भरत की इस स्थिति के जिम्मेदार हैं । वे सोचने लगे, राज्य पाकर भी, राजा बनकर भी भरत राज-सुख नहीं भोग सका । वह भी एक प्रकार से बनवास ही कर रहा है । जितने कष्ट मैंने सहे, उतने ही कष्ट मेरे कारण उसे भी सहने पडे । मैं तो पिताश्री के वचन को निभाने के लिए वन गया । परंतु यह राजा होते हुए भी भिखारी ही बना रहा । यह मेरे प्रेम का भिखारी है । मेरा त्याग इसके त्याग के सामने बहुत ही लघु है । इस प्रकार राम सोचता रहा और भरत के प्रति उसका प्रेम एकदम उमड़ पड़ा । उसे उठाकर अपने आलिंगन में ले लिया । दोनों आलिंगन में अपने आपको लंबी अवधि तक भूल ही गये ।

राम ने भरत को विमान में चढ़ा लिया और आनंद से फिर से अपने आलिंगन में ले लिया । भरत ने लक्ष्मण से कुशल-मंगल पूछा और सीता को प्रणाम किया । सब वानर वीरों को उसने गले लगाया । फिर सुग्रीव से कहा "तुम हम चारों भाइयों के लिए पाँचवें भाई हो गये हो ।" फिर विभीषण से कहा "जो उपकार करता है, वह मित्र होता है । तुम्हारी मित्रता हम कभी भी भूल नहीं सकते ।"

शत्रुघ्न ने राम, लक्ष्मण को प्रणाम किया और सीता के पैरों को श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया । राम ने अपनी माता के पैरों को प्रणाम किया । फिर सुमित्रा, कैकेयी और वसिष्ठ को नमस्कार किया । सब नागरिकों ने बड़े ही उत्साह से राम का स्वागत किया ।

भरत ने राम की पादुकाओं को स्वहस्तों

से उसके पैरों में पहनाया और कहा "आज तक जिस राज्य का पालन करता आ रहा था, उसे तुम्हें सौंप रहा हूँ । फिर से तुम्हें अयोध्या लौटे हुए देखकर मेरा जन्म सार्थक हो गया है । मेरी इच्छा पूर्ण हुई है ।"

राम विमान में ही नंदिग्राम पहुँचा । उसके साथ जितने भी लोग थे, उनके साथ राम विमान से उतरा और विमान से कहा कि तुम कुबेर के पास चले जाओ ।

राम के राज्याभिषेक का मुहूर्त निर्णीत हुआ । राम, लक्ष्मण, भरत ने नाइयों से अपने बाल कटवाये । भरत, लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण व राम ने मंगलमय स्नान किया । राम ने पुष्पमालाएँ डालीं और शरीर में चंदन पुतवाया । नीले रंग के वस्त्र पहनकर सिंहासन पर आसीन हुआ । राम, लक्ष्मण तथा भरत को हार तथा अन्य आभूषणों से शत्रुघ्न ने अलंकृत किया । दशरथ की पत्नियों ने सीता का अलंकार किया ।

जब सुमंत्र नामक सारथी रथ ले आया तब राम उसमें बैठा । सुग्रीव, हनुमान आदिने स्नान किया और अच्छे वस्त्र व आभूषणों को पहनकर अयोध्या चले ।

दशरथ के मंत्री पहले ही अयोध्या पहुँचे और गुरु वसिष्ठ से आवश्यक परामर्श करके राज्याभिषेक की तैयारियाँ की ।

सुग्रीव की मित्रता, हनुमान की प्रभावशाली शक्ति, बानरों का युद्ध में दिखाया गया पराक्रम, विभीषण का उसके पक्ष में आ जाना आदि सविस्तार रामने जब नागरिकों को बताया, तो उनके आश्चर्य की सीमा ना रही । राम दशरथ के कक्ष में पहुँचा । राम का मंदिर, अंतःपुर आदि अतिथियों के ठहरने और उनके विश्राम के लिए सुरक्षित रखे गये ।

सुग्रीव ने चार सुवर्ण कलश उत्तम बानरों को सौंपा और आज्ञा दी "कल प्रातःकाल तक तुम चारों समुद्र जल लिये यहाँ उपस्थित रहो ।"

"जैसे को तैसा"

चीन के कोने के एक गाँव में एक ज़मींदार था । उसके पास कोई भी नौकर अधिक दिन काम कर नहीं पाता था । वह उनसे खूब काम करवाता था लेकिन जब मज़दूरी देने का वक़्त आता तो उनपर झूठा इल्ज़ाम लगाता कि मेरा बताया हुआ काम उसने ठीक तरह से नहीं किया है । उल्टे उनको गाली देता और काम से निकाल देता था ।

ज़मींदार के इस दुष्ट स्वभाव से सब परिचित थे, इसलिए उस गाँव का कोई भी व्यक्ति उसके अधीन काम करने केलिए तैयार नहीं था ।

परंतु कुछ बेचारे मासूम लोग पड़ोस के गाँव से आते और मेहनत करते । बिना मज़दूरी पाये ही वापस चले जाते थे ।

उसके इस बरताव का कोई भी खुलकर विरोध नहीं कर पाता था । अपने रईस होने का उसे बडा ही गर्व था । इस बूते पर ही वह हर किसी पर अपना हुक्म चलाता था । उसको मालूम था कि कोई भी उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते । इसलिए किसी भी नौकर ने दूसरे से जाकर शिकायत करने की जुर्रत नहीं की । क्योंकि इस शिकायत से कोई फ़ायदा नहीं होगा । उल्टे उसी को और नुकसान होगा । ऐसा करने पर हो सकता है, वह केवल नौकरी से ही निकाला ना जाए, बल्कि उसको शारीरिक दंड भी भुगतना पड़े ।

एक दिन दूर के गाँव से एक लड़का उनके यहाँ काम पर आया, जो देखने में बडा मासूम लग रहा था । उसे ज़मींदार के घर में काम मिल गया ।

"ऐ छोकरे, पहले ही से तुमसे बोल देना अच्छा होगा । मैं जो काम तुम्हें सौंपूंगा, अगर तुमने वे काम ठीक तरह से नहीं किया

श्रीमती सीतालक्ष्मी

तो पैसे देने की बात तो दूर, नौकरी से भी तुरंत ही बरख्वास्त कर दूँगा। पहले से ही अच्छी तरह से सोच लो। बाद दुखी होने से कोई फ़ायदा नहीं होगा" ज़मींदार ने कहा। "आपने ठीक ही तो कहा है। जो काम सौंपा जाए, वह अगर किया ना ज़ाए तो ग़लत ही तो है।" उस नये नौकर ने कहा।

जब से वह काम पर लग गया तब से तड़के ही मुर्गी के बांग के साथ काम शुरू करता और अंधेरा होते तक काम पर लगा रहता था। उसने कहीं, कभी कोई सुस्ती नहीं दिखायी।

एक दिन ज़मींदार ने नौकर को बुलाया और कहा "और सुनो, पहाड़ पर बॉस के पौधे उग आये हैं, उनमें पत्ते भी निकल आये हैं। कल हमारे बैल को ले जाओ। वह उनके कोमल पत्ते खा लेगा। कहीं उन पत्तों को तोड़कर उसे मत चरने देना।"

नौकर ने कहा "इस में क्या बड़ी बात है? ऐसा ही करूँगा।" दूसरे दिन बैल को लेकर वह पडाड़ पर गया। बैल को एक बॉस के पेड़ से बॉध दिया। फिर वह बड़ी छड़ी से उसे मारने लगा और चिल्लाता रहा, ऊपर चढ़ो, चढ़ते क्यों नहीं?

वह बैल उसकी मार सह ना पाया। वह पेड़ के चारों ओर इधर-उधर भागने लगा।

उस रास्ते से जो गुज़र रहे थे, देखते और ठठाकर हँसते हुए चले जाते। जल्दी ही इसकी खबर ज़मीदार के कानों में पड़ी। जल्दी-जल्दी भागता हुआ वह वहाँ आया और बोला 'उस बैल को मार डालने का ठान रखा है क्या?"

"आप क्या जानते हैं, चुप रहिये । देखिये यह कितना घमंडी है । ऊपर चढ़कर पत्ते खाने को कह रहा हूँ ओर यह ऊपर चढ़ने का नाम ही नहीं ले रहा है । मार डालूँगा, तभी इसकी अक्ल ठिकाने लगेगी" नौकर ने कहा ।

"अब बस करो । तुम्हें पत्ते चराने की कोई ज़रूरत नहीं । बैल को घर ले आओ ।" ज़मींदार ने कड़ाई से कहा ।

जब से यह हुआ तब से नौकर पर वह बहुत नाराज़ रहता था । उसने निश्चय किया कि कोई बहाना बनाकर पैसे दिये बिना उसे काम से निकाल देना चाहिये । इस बहाने के लिए वह माथापच्ची करने लगा ।

एक दिन उसने नौकर से कहा "देखो, अपने घर के ऊपर के खपरैलों से ढ़की छत । वह बहुत ही विशाल है । पर क्या फ़ायदा? तुम कल सबेरे एक काम करना । उसपर चढ़कर वहाँ तरकारियों के पौधे रोपना ।"

"इसमें क्या बडी बात है । ऐसा ही होगा" नौकर ने अनायास ही कह दिया ।

दूसरे दिन सबेरे ही उसने एक कुदाल ली और ऊपर चढ़ गया । फिर खपरैलों को उस कुदाल से फोड़ना शुरू कर दिया । खपरैल के कुछ टुकडे घर में सोते हुए ज़मीदार पर गिरे । वह चौंककर उठा और बाहर आकर देखा तो बात समझ में आयी । उसने कहा "खपरैल क्यों इस तरह फोड़ रहे हो? क्या सूझी है-आखिर तुझे ।" "आप चुप रहिये, आप कुछ नहीं जानते । पौधे रोपने के लिए पूरी छत खाली कर रहा हूँ ।" नौकर ने कहा ।

"बाप रे, तेरा पुण्य होगा । तुम नीचे उतर आओ । तुम्हें पौधे रोपने की ज़रूरत नहीं ।" ज़मींदार ने कहा ।

ज़मींदार की समझ में नहीं आया कि ऐसे नालायक के साथ क्या करूँ?

गरमी के दिन आये । पानी की कमी की वजह से ज़मींदार के खेतों की फ़सल बिगड़ी जा रही थी ।

इस हालत में उसने नौकर से कहा "अरे, गरमी की वजह से हमारे खेत सूख रहे हैं । इसलिए हमारे सब खेतों को सबेरे-सबेरे सावधानी से घर में लाकर रखना ।"

सोचा कि इस उपाय से नौकर की छुट्टी हो जायेगी। यह निशाना अवश्य ही नहीं चूकेगा।

"इसमें क्या रखा है, ऐसा ही होगा" नौकर ने बताया ।

दूसरे दिन सबेरे जब ज़मींदार उठा तो सुना कि पास ही बहुत ही शोर मच रहा है । वह बाहर आया ।

नौकर बड़ा कुदाल लेकर घर के सामने की दीवार को तेज़ी से गिराने के काम पर लगा हुआ है । मुख्य द्वार को निकालकर उसने बाहर फेंक दिया है । बड़ी दीवार धीरे-धीरे गिर रही है ।

"जानवर कहीं के? क्या कर रहे हो? क्या तेरी अक्ल धास चरने गयी है?" ज़मींदार ने क्रोधित होते हुए कहा ।

"आप चुप रहिये, आप कुछ नहीं जानते" कहते हुए दीवार को गिराने के काम में तल्लीन हो गया ।

ज़मींदार ने गरजते हुए कहा "वह काम बंद करोगे या नही?" "आप ही ने तो कहा था, खेत घर ले आना" नौकर ने कहा

"इसके लिऐ मैने थोड़े ही दीवार गिराने को कहा था?" ज़मींदार ने कहा ।

"कम से कम सामनेवाली यह दीवार ना गिराऊँ तो कैसे खेत अंदर ले आ सकूँगा?" बडी मासूमी से नौकर ने कहा ।

इस धटना से ज़मींदार को अक्ल आयी । वह समझ गया कि इस नौकर के सामने मेरी दाल नहीं गलेगी । इसके बाद उसे भारी रकम रेकर उससे छुटकारा पाया ।

चंदामामा की ख़बरें

एवरेस्ट शिखर पर स्त्रीयाँ

एवरेस्ट शिखर पर चढ़नेवाली प्रथम महिला कौन है? वह है जापान की जुंको टाबी । क्या जानते हो कि एवरेस्ट शिखर पर पहुँचनेवाली प्रथम भारतीय महिला कौन है? बचेंद्रपाल उसका नाम है । उस शिखर पर दो बार पहुँचनेवाली स्त्री हमारे ही देश की है, जिसका नाम है संतोष यादव । संसार की कोई भी महिला दो बार वहाँ नहीं गयी थी । १९९३, मई १० को उसने यह यश प्राप्त किया । १९९२ में पहली बार वह एवरेस्ट चढ़ी । वह जब दूसरी बार एवरेस्ट अधिरोहण के लिए गयी, तक उसके साथ कुँग भुरीया, डिक्की डोल्मा नामक दो युवतियाँ भी उसके साथ थीं । यह पहला पर्वतारोहण है, जिसमें केवल स्त्रीयों ने भाग लिया । एक सप्ताह के ही अंदर मई १६ को बचेंद्रपाल के नेतृत्व में दीपु शर्पा, राधा देवी, सुमनकुटियाल, वनिता मार्टोलिया नामक चार महिलाओं ने एवरेस्ट का अधिरोहण करके एक और नये रिकार्ड की स्थापना की । उसी दिन याने मई १६ को स्पानिश पर्वतारोहण समूह की नेपाल शेरपा-अंगरीहा नवीं बार एवरेस्ट शिखर पर पहुँची । १९८३ में प्रथम बार एवरेस्ट अधिरोहण करनेवाली अंगरीटा ने, १९८४, १९८५, १९८७, १९८८, १९९०, १९९२ में फिर से एवरेस्ट का अधिरोहण किया । उसके रिकार्ड को तोड़ना कोई आसान बात नहीं है ।

आकाश में भोजन-पदार्थों की घोषणा

आकाश में बडे-बडे गुब्बारे उड़ाये जाते हैं । उन पर व्यापार के विज्ञापन आजकल सामान्य बात हो गयी है । इनके द्वारा जनता का ध्यान सुगमता से आकर्षित किया जा सकता है । बहुत ही जल्दी एक मील की लंबाईवाले बिलबोर्ड को आकाश में उड़ाने के प्रयत्न एक अमीरीकी व्यापारिक संस्था कर रही है । इसका विरोध करनेवालों का कहना है कि यह एक गंभीर और भयानक विषय है । फिर भी बहुत ही जल्दी विचित्र भोजन-पदार्थों की घोषणा का साक्षात्कार आकाश में होनेवाला है ।

'हड़ताल' करनेवाली घड़ी

लंदन नगर की 'वेस्ट मिनिस्टर' में स्थित 'बिगबेन' घड़ी की ध्वनि संसार भर में प्रसिद्ध है । पंद्रह मिनिटों में एक बार, तीस मिनिटों में एक बार, पौने घंटे में एक बार, घंटे में एक बार मधुर ध्वनि निकालने के लिए इसमें विशिष्ट घंटियों का प्रबंध हुआ है । अभी हाल ही में आठ हफ्तों तक पंद्रह मिनिटों में एक बार बजनेवाली घंटियाँ रुक गयी थीं । तकनीकी निपुणों ने अंदर के 'गियर चक्र' को बदल दिया तो फिर से काम करना शुरू हो गया । लेकिन मई १९ की शाम को ६-११ से ९.२५ तक घंटियों की कोई आवाज़ सुनाई नहीं पड़ी । इंजनी- यर गंभीर रूप से सोचने लग गये कि इस हड़ताल का कारण क्या हो सकता है, तो तभी उन घंटियों से फिर से यथावत् मधुर ध्वनि गूँजने लग गयी ।

ब्रह्मा की गाँठ

बहुत पहले काशी नगर में राजपाल नाम का एक युवक रहता था। बचपन में ही उसके माँ-बाप गुज़र गये। उच्च पदवी के दो अधिकारियों से आर्थिक सहायता पाकर उसने श्रद्धा से शिक्षा प्राप्त की। उच्च पदवी के दो अधिकारियों की सहायता से दरबार में एक अच्छी नौकरी भी प्राप्त की।

नौकरी मिलते ही उसका ध्यान विवाह की ओर आकृष्ट हुआ। माता-पिता जीवित होते तो उसका विवाह कभी का हो गया होता। इस समय तक पत्नी भी आ चुकी होती और सुख से साँसारिक जीवन बिताता होता। अविवाहित होने के कारण उसका कहीं कोई निश्चित ठिकाना नहीं रहा। जहाँ चाहा, खाया और जहाँ चाहा, सोया। समझ लीजिये, सराय में भोजन, मठ में निद्रा।

अपने अनुभव से जान गया कि दूसरों की सहायता के बिना विवाह करवा असंभव है, इसलिए उसने अपने एक मित्र से अपने मन की बात बतायी। उसने उससे कहा "देखो मित्र, इस संसार में मैं अकेला हूँ। माता-पिता तो हैं नहीं। इसलिए मुझे लड़की देने कोई आगे नहीं आ रहा है। तुम्हीं मेरे योग्य एक कन्या ढूँढ़ो"

उसके मित्र ने सलाह दी "न्यायाधीश की एक अविवाहित कन्या है। सब दृष्टियों से वह तुम्हारे लिये योग्य कन्या है। आज रात ही को तुम्हारे बारे में बताऊँगा और उन्हें किसी तरह मनाऊँगा। कल सूर्योदय के समय पर हम दोनों मणिकर्णिका घाट पर मिलेंगे। वहाँ तुम्हें बताऊँगा कि मेरे प्रयत्न का परिणाम क्या हुआ?"

रात-भर राजपाल सो नहीं पाया। चौथे पहर के आरंभ में उसने बाहर झाँका तो उसे लगा कि सुबह हो गयी है। वह

कु. सुकन्या

जल्दी-जल्दी माणिकर्णिका घाट पर पहुँचा ।

जिसे वह प्रातःकालीन कांति समझ रहा था, वह चाँदनी थी । उस समय मणिकर्णिका घाट सुनसान था, निर्जन था । राजपाल को लगा कि उसे अपने मित्र के लिए बहुत देर तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी । उसने देखा कि दूरी पर सीढ़ियों पर कोई व्यक्ति बैठा हुआ है । यह सोचकर राजपाल उसके पास गया कि उससे बातें करते हुए अपना थोडा-सा समय बिता दूँ ।

सीढ़ी पर बैठा हुआ वह व्यक्ति वृद्ध था । चाँदनी की कांति में वह कुछ ताल के पत्र बड़ी तीक्षणता से देख रहा था । राजपाल ने वृद्ध के पीछे से देखा तो उसे मालूम हुआ कि वह लिपि बहुत ही विचित्र है ।

''दादाजी, मैं तो बहुत-सी लिपियाँ जानता हूँ । पर आप जो लिपि लिख रहे हैं, मेरी समझ के बाहर हैं'' उसने उस वृद्ध से कहा ।

वृद्ध ने अपना सर उठाते हुए कहा ''तुम कैसे जान पाओगे? यह तो ब्रह्मलिपि है'' ।

राजपाल ने पूछा ''आप क्या लिख रहे हैं?''

'सुर्योदय के पूर्व ही जन्म लेनेवालों की जन्म-कुंडलियाँ'' बिना सर उठाये ही वृद्ध ने कहा ।

थोड़ी ही देर में वृद्ध ने लिखने का काम पूरा कर लिया और ताल-पत्र बाँधकर बग़ल में रख दिया । फिर एक थैली निकाली और उसमें से लाल धागे और सफ़ेद धागे निकाले । उनसे गाँठ बांधने का काम प्रारंभ कर दिया ।

''दादाजी. ये धागे क्या हैं? आपकी इन गाँठों का उद्देश्य क्या है?'' राजपाल ने पूछा ।

''ये ब्रह्मगाँठ हैं । जिस पुरुष के भाग्य में जो स्त्री लिखी हुई है, उन की गाँठ बाँध रहा हूँ ।'' सिर उठाये बिना वृद्ध बड़ी ही तल्लीनता से अपना काम किये जा रहा था ।

''तब तो आपको मालूम ही होगा कि मेरी गाँठ किससे बंधी है । थोड़ी ही देर में अपने विवाह के निश्चित हो जाने का समाचार सुनने के लिए अपने मित्र की प्रतीक्षा कर रहा हूँ ।''

राजपाल ने बडे उत्साह से बताया । वृद्ध ने सर उठाकर उसकी ओर देखते हुए कहा ''तुम्हारा विवाह निकट भविष्य में होनेवाला नहीं है । तुम्हारी होनेवाली पत्नी की आयु

अब केवल तीन साल है । जब तक वह सत्रह वर्ष की नहीं होगी, तब तक तुम दोनों का विवाह नहीं होगा ।"

"और चौदह वर्ष तक मेरा विवाह नहीं होगा, यह तो असंभव है" राजपाल ने कहा ।

"उधर देखो, वह जो, एक आँखवाली स्त्री आ रही है, उसकी कांख में जो बच्ची है, वही तुम्हारी होनेवाली पत्नी है ।" वृद्ध ने कहा ।

राजपाल तुरंत सीढ़ियों पर चढ़ आया और उस बूढ़ी के पास पहुँचा । वह बूढ़ी एक आँख से अंधी थी, गंदे कपडे पहने हुए थी । उसने बच्ची को सीढ़ी पर बिठाया और गंगा में स्नान करने सीढ़ियाँ उतरकर जल्दी-जल्दी चली गयी । वह बच्ची तीन साल की उम्र की होगी । उसने सोचा, वह उस बूढ़ी की बेटी होगी ।

इस विचार मात्र से उसे उस बच्ची से घृणा होने लगा गयी कि पत्नी है, होनेवाली वह उसकी उसने उस वृद्ध के लिए ढूँढ़ा, लेकिन वह कहीं भी नहीं मिला । उस क्षण वह निर्णय नहीं कर पाया कि उस वृद्ध की बातों का विश्वास किया जाए या नहीं । उसे लगा कि जब तक वह उस लड़की को मार नहीं डालेगा तब तक उसमें अशांति ही अशांति होगी ।

अपने मित्र के लिए वह और रुकना नहीं चाहता था । उसका मित्र जिस कार्य पर गया हुआ है, अगर वह सफल हुआ होता तो अब तक लौटता । शायद वह अपने कार्य में असफल रहा होगा ।

ऐसा सोचने के बाद राजपाल नगर में आया । थोड़ी दूर जाने के बाद दरबार में काम करनेवाला एक नौकर उसे दिखाई पड़ा । राजपाल ने उसे बुलाया और उससे कहा " एक पिशाचिन एक छोटी बच्ची के रूप में जीवित है । अगर तुमने उसे चाकू से भोंक दिया और मार डाला तो तुम्हें दस अशर्फियाँ भेंट में दूँगा । बोलो, यह काम करोगे या नहीं?"

नौकर ने कहा "पिशाचिन को ज़िन्दा रखना नहीं चाहिए । उसे मारना ही होगा । दिखाओ कि वह कहाँ है? अभी उसका काम ख़तम करके आता हूँ ।"

राजपाल उस नौकर को लेकर वापस लौटा । वह बूढ़ी स्नान करके बच्ची को लेकर

वापस जा रही थी । उसे दिखाते हुए राजपाल ने कहा "देखो, उसकी कांख में जो बच्ची है, वही पिशाचिन है । मेरा काम पूरा करके मेरे पास चले आओ" । कहता हुआ राजपाल वहाँ से चला गया । शिशु-हत्या अपनी आँखों के सामने होते हुए देखने की हिम्मत वह नहीं रखता था ।

नौकर बूढ़ी से मिला । वह उसके पीछे-पीछे जाने लगा । धीरे-धीरे उसने अपना चाकू उठाया और बच्ची को चाकू से भोंकनेवाला ही वाला था कि उस बच्ची ने अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से उसे फाड़ -फाड़ कर देखा । उन आँखों को देखते हुए नौकर को लगा कि यह तो साधारण बच्ची ही है । उसने उस बच्ची की हत्या करने का इरादा छोड़ दिया । लेकिन उसने जो चाकू हाथ में लिया, उससे उसकी आँख के ऊपर एक छोटा-सा घाव किया और भाग निकला ।

फिर वह राजपाल से मिला । उसने यह झूठ बताकर अपनी भेंट पा ली कि मैंने उस पिशाचिन की हत्या कर दी ।

राजपाल को शिशु-हत्या के अपराध पर अवश्य ही पश्चात्ताप हुआ, पर उसे इस बात पर आनंद हुआ कि उस लड़की से विवाह करने से उसने अपने को बचा लिया । अब उसने अपना विवाह करने के भरसक प्रयत्न किये । लेकिन उन प्रयत्नों में वह सफल नहीं हो पाया । साल गुज़र गये । नौकरी में उसकी काफी तरक्की हुई, पर दुख तो इस बात का था कि वह गृहस्थी नहीं बन सका ।
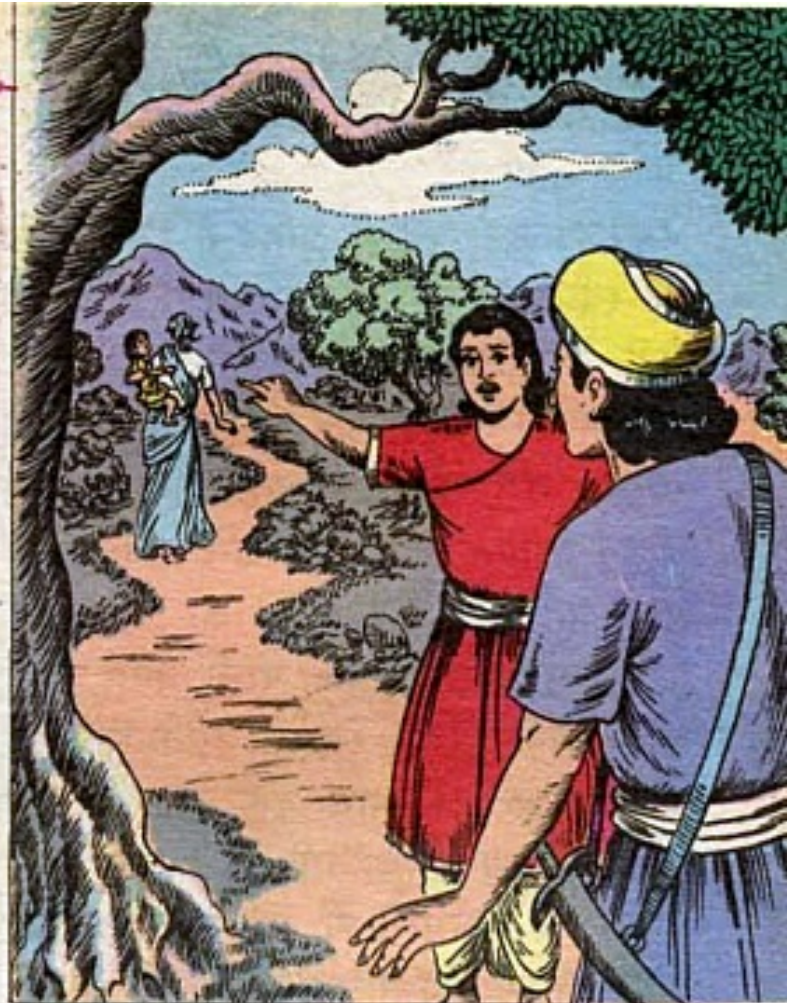
चौदह साल बीत गये । एक नया न्यायाधीश अब उसका अधिकारी था । राजपाल की समर्थता, ईमानदारी, और काम करने की उसकी पटुता देखकर वह उससे बहुत खुश हुआ । उसे इस बात पर आश्चर्य भी हो रहा था कि इस उम्र में भी राजपाल का विवाह क्यों नहीं हो पाया?

"विवाह करने का प्रयत्न लगातार करता आ रहा हूँ । लेकिन मैं असफल ही होता आया हूँ ।" राजपाल ने अपनी चिंता प्रकट करते हुए न्यायाधीश से कहा ।

तब न्यायाधीश ने बताया "शादी की उम्र की मेरी एक बेटी है । बहुत ही सुँदर और पढ़ी-लिखी है । काम-काज में बड़ी ही निपुण है । तुम उससे शादी करोगे तो

अच्छा होगा ।"

राजपाल ने बड़े ही आनंद से इस प्रस्ताव को स्वीकार किया । न्यायाधीश ने अपनी बेटी की शादी राजपाल से करवायी । रत्नाभरणों से सुसज्जित वह युवती बड़ी ही मनोहर लग रही थी । वह अब ग्प्रहस्थ्य जीवन बिताने लगा, तब उसे लगने लगा मानों वह स्वर्ग में विचरण कर रहा हो । परंतु उसने देखा, उसकी पत्नी अपने केशों को यों सँवारती थी, जिससे उसके माथे की दायीं तरफ़ का भाग ढ़क जाए । वहाँ एक आभूषण भी पहनती थी । जब बाकी गहनों को अलमारी में रख देती, तब भी वह आभूषण वहाँ से नहीं निकालती थी ।

एक बार राजपाल ने इसके बारे में उससे पुछा तो उसने कहा "जब मैं तीन साल की थी, एक दुष्ट मुझे चाकू से मार डालना चाहता था । माथे पर एक छोटा-सा धाव करके भाग गया । वह धाव दिखे तो बुरा लगेगा, इसलिए उसे ढ़कने के लिए ही मैं ऐसा करती रहती हूँ ।"

राजपाल स्त-ध रह गया और बोला "तो उस दिन एक आँखवाली बूढ़ी, जो तुम्हें नदी के किनारे ले आयी थी, क्या वह तुम्हारी माँ नही है?"

उसके इस प्रश्न ने उस युवती को आश्चर्य में डुबो दिया और बोली "उस औरत को आप कैसे जानते हैं? उसने मुझे सिर्फ़ पाला है । मैं इस न्यायाधीश की सगी बेटी नहीं हूँ, इनके भाई की बेटी हूँ । आप ही की तरह बचपन में ही मेरे माँ-बाप गुज़र गये हैं । उस एक आँखवाली दादी ने ही मुझे पाला-पोसा है । मेरे चाचा ने मुझे गोद लिया है ।"

राजपाल ने बिना कुछ छिपाये पूरा-पूरा विवरण उसे बता दिया । उसकी इन बातों से वह युवती बिलकुल क्रोधित नहीं हुई । उसने कहा "तो उस दिन मणिकर्णिका घाट पर जिस व्यक्ति को आपने देखा है, वे अवश्य ही ब्रह्मदेव ही होंगे ।"

प्रकृति-रूप अनेक

नारियल के पेड़

इस पेड़ का हर हिस्सा उपयोग में लाया जाता है, इसलिए नारियल के पेड़ को कल्पवृक्ष और हरा सोना कहते हैं। विटमनों व खनिज पदार्थों से भरा बलवर्धक पानी हैं, नारियल का पानी। कोमल गरी के बारे में भी यही कहते हैं। सूखे खोपर से तेल निकाला जाता है। वह रसोई के लिए उपयोग में लाया जानेवाला मुख्य तेल है। नारियल का तेल बालों में भी लगाया जाता है और अच्छा भी है। साबुन, अलंकार की वस्तुओं और दवाओं की तैयारी में इस नारियल के तेल का उपयोग होता है। इसके चूर्ण को पशुओं के खाने के लिए उपयोग में लाते हैं। नारियल के उपर के रेशे से रंग-बिरंगे गुड़िये
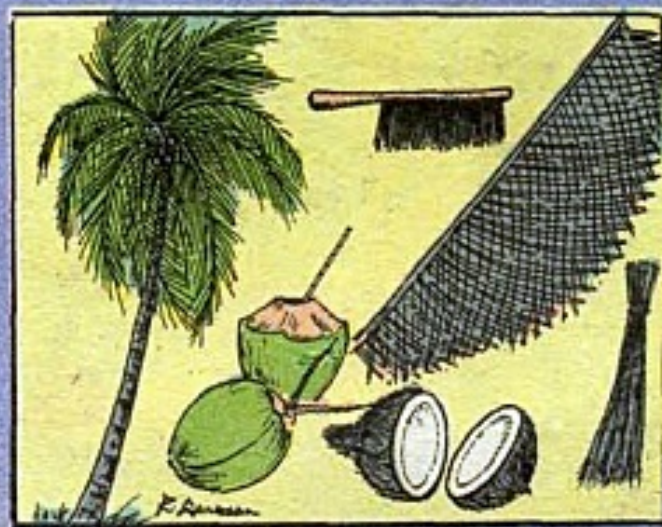
व अन्य वस्तु बनायीं जाती हैं। नारियल के रेशे से मज़बूत रस्सियाँ, चटाइयाँ, टट्टियाँ आदि बनाते हैं। नारियल के पत्तों को घर के छतों को ढँकने के काम में और पत्तों की पतली लकड़ियों को झाड़ू बनाने के काम में लाते हैं। नारियल के पेड़ के मुख्य भाग को झोंपड़ियों के लिए खंभों के उपयोग में लाये जाते हैं। नारियल का पेड़ लगभग २५ मी. की ऊँचाई तक बढ़ता है। रोपने के तीन-चार सालों में यह नारियल देना शुरु करता है। अच्छी नस्ल के पेड़ साल में ३०० नारियल तक देते हैं। इन्हें दो महीनों में एक बार तोड़ा जाता है।

गर्भ धारण करनेवाले पुरुष—पानी के घोड़े

समुँदर जहाँ गहरा ना हो, वहाँ पानी के घोड़े बसते हैं। ये प्राणी बडे ही विचित्र जंतु हैं। मछलियों की तरह ये टेढ़ा नहीं तैरते बल्कि सीधे तैरते हैं। इनका मुख देखने में छोड़े का मुख जैसा है। दोनों आँखों से चारों ओर वह देख सकता है। पानी के पुरुष घोड़ों के पेट के नीचे थैली की तरह का एक भाग होता है। पानी में

स्त्री घोडे, पुरुष घोड़ों के पास जाकर एक एक बार दो सौ अंडे रख आती हैं। उसके बाद पाँच सप्ताह पानी के पुरुष घोड़े ही इन अंडों की रक्षा करते हैं। अंडे से जब बच्चे बाहर आने लगते हैं, तब वह थैली खुल जाती है। बच्चे बाहर आ जाते हैं।

Say "Hello" to text books and friends
'Cause School days are here again
Have a great year and all the best
From Wobbit, Coon and the rest!

SUPER
RUBBER
It's time to go back to school again. Time for text
books. Time for games. Time to meet old friends.
And make new ones. Time to start studying
again. Because there's so much to learn about
the world around you.
From all of us here at Chandamama, have a
great year in school. And remember to tell us
what you've learnt everyday, when you
come home from school !
THE
HANDAMAMA
ARTIG1246

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अक्तूबर, १९९३ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

M. Natarajan

P.R. Murthy

* उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । * १० अगस्त'९३ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए । * अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००-/ का पुरस्कार दिया जाएगा । * दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

जून १९९३, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : जल की धारा हमारी जीवन-धारा!

दूसरा फोटो : प्रकृति का श्रृंगार शीतल झरनों की धार!!

प्रेषक : कु.उपमा सक्सेना, C/o जगदीश सिंह यादव
Near Police Chowki, Madhinath Road, BAREILI-243 001

पुरस्कार की राशि रु. १००/- इस महीने के अंत में भेजी जाएगी ।

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
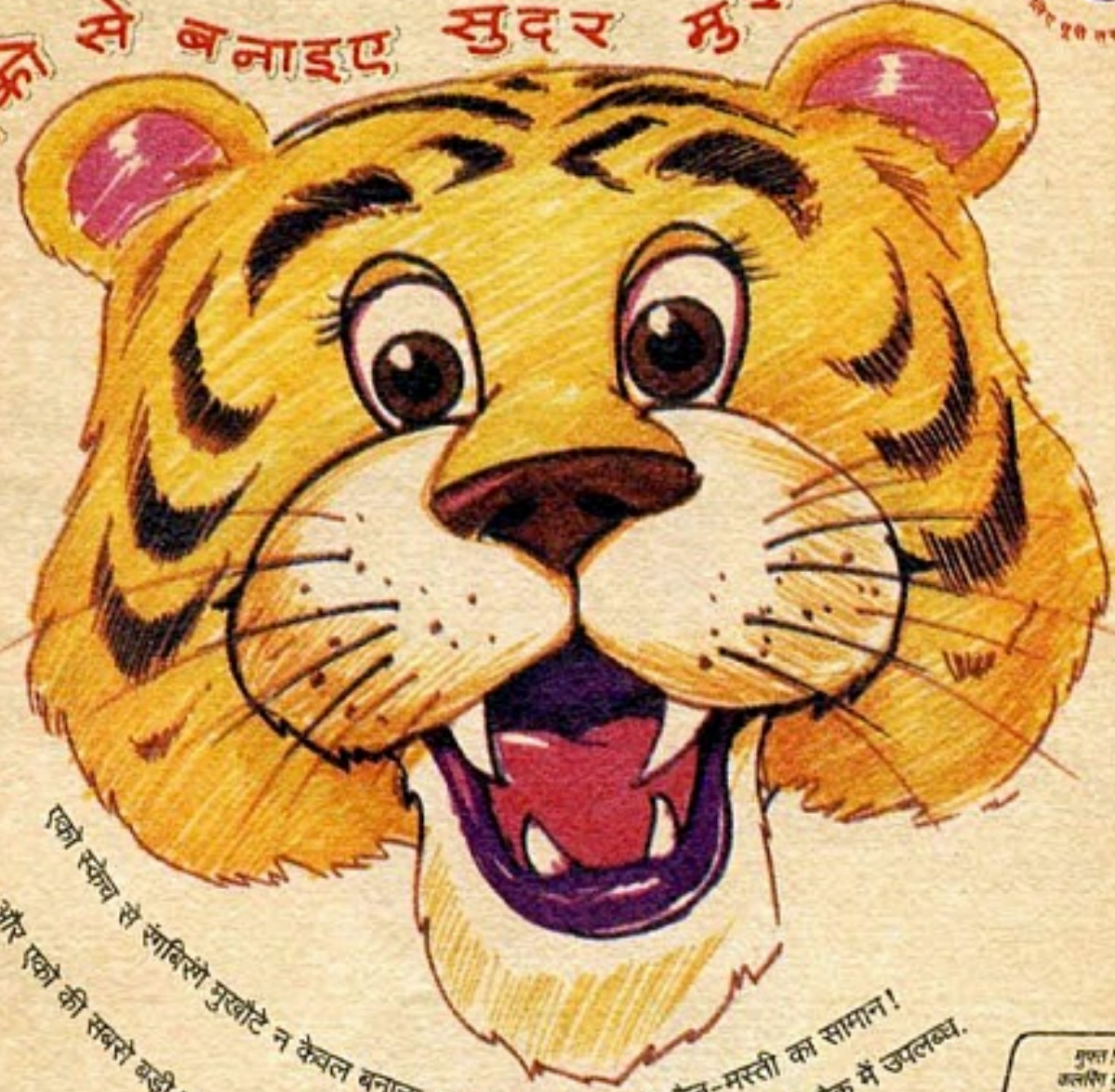
एको से बनाइए सुंदर मुखौटे!
एको स्टेंसिल से रंगबिरंगे मुखौटे न केवल बनाना आसान... बल्कि ये है मौज-मस्ती का सामान!
एको – अनेक सुंदर रंगों में १२, २४ और ३० के पैक में उपलब्ध.
और एको की सबसे बड़ी खूबी, ये हैं वॉटर-बेस रंग और अविषैले भी यानी
इनका इस्तेमाल भी नन्हें-मुन्नों के लिए पूरी तरह सुरक्षित है!
और फिर जब मम्मी देखेंगी आपका कमाल... तो खुशी से होगा बुरा हाल!
एको – मौज़मस्ती का बेहिसाब हंगामा!
हजारों इनाम जीतो!
Ekco®
आपकी कला की सुंदर अभिव्यक्ति.

मिठाई में
नारियल
मुँह में
हलचल
nutrine
COOKIES
बच्चे झूमें-गायें, मौज मनायें
कोकानाका कुकीज
THE FINEST, WIDEST RANGE
isesh/NC/9090/Hin